RIN No.: MPBIL/2001/5256
DAVP Code : 128101
Postal Registration No. : भोपाल/म.प्र./581/2021-2023
Publish Date : Every Month Dt. 05
Posting Date : Every Month Dt. 15
Rs. 10/-

वर्ष 22 अंक 03 05 नवम्बर 2021

जगत विज़न

उपचुनावों में पार्टी पर नहीं उम्मीदवारों पर लगी मुहर

बीजेपी की अपेक्षा कांग्रेस का वोट प्रतिशत बढ़ा

Scanned with CamScanner

प्रेरणा स्त्रोत : स्व. श्री जगत पाठक

संपादक	विजया पाठक
कार्यकारी संपादक	समता पाठक
मध्यप्रदेश संवाददाता	अर्चना शर्मा
राजनीतिक संवाददाता	समीर शास्त्री
विशेष संवाददाता	बिन्देश्वरी पटेल
छत्तीसगढ़ ब्यूरो चीफ	मणिशंकर पाण्डेय
छत्तीसगढ़ संवाददाता	आनन्द मोहन श्रीवास्तव,
पश्चिम बंगाल ब्यूरो चीफ	अमित राय
गोवा ब्यूरो चीफ	अजय सिंह
गुजरात ब्यूरो चीफ	गौरव सेठी
दिल्ली ब्यूरो चीफ	विजय वर्मा
पटना संवाददाता	सौरभ कुमार
उत्तरप्रदेश ब्यूरो चीफ	वेद कुमार
बुंदेलखण्ड संवाददाता	रफत खान
विधिक सलाहकार	एडवोकेट राजेश कुंसारिया

सम्पादकीय एवं विज्ञापन कार्यालय

भोपाल

एफ-116/17, शिवाजी नगर, भोपाल
मो. 98260-64596, मो. 9893014600
फोन : 0755-4299165 म.प्र. स्वत्वाधिकारी,

छत्तीसगढ़

4-विनायका विहार, रिंग रोड, रायपुर

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक,
विजया पाठक द्वारा समता ग्राफिक्स एफ-116/17, शिवाजी नगर, भोपाल म.प्र. द्वारा कम्पोज एवं जगत प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स प्लाट नं. 28 सुरभि विहार बीडीए रोड भेल भोपाल से मुद्रित एवं एफ-116/17, शिवाजी नगर, भोपाल म.प्र. से प्रकाशित संपादक विजया पाठक। समस्त विवादों का कार्यक्षेत्र भोपाल सत्र-न्यायालय रहेगा। पत्रिका में प्रकाशित किये जाने वाले संपूर्ण आलेख एवं सामग्री की जिम्मेदारी लेखक एवं संपादक की होगी।

E-mail : jagat.vision@gmail.com
Website: www.jagatvision.in

मासिक द्विभाषी पत्रिका वर्ष 22 अंक 03 05 नवम्बर 2021

उपचुनावों में पार्टी पर नहीं उम्मीदवारों पर लगी मुहर

बीजेपी की अपेक्षा कांग्रेस का वोट प्रतिशत बढ़ा

(पृष्ठ क्र.-6)

- हसदेव अरण्य क्षेत्र में कोयला खदान खोले जाने का मामला 26
- प्रियंका गांधी का अब तक का सबसे बड़ा राजनीतिक दांव 32
- सियासी मुद्दा क्यों नहीं बनती हैं पहाड़ों की आपदाएं ? 35
- सरकारी खजाने पर बढ़ा बोझ 38
- नितीश कुमार और लालू प्रसाद यादव की जुगलबंदी 40
- धरती के बढ़े तापमान ने जीना किया मुश्किल 44
- अमेरिका में सिखों पर नस्लीय हमला 48
- बुनियादी सुविधाओं से दूर शहरीकरण का बोझ ढोती मलिन बस्तियां .51
- क्या कश्मीर में फिर बनने लगे 1990 जैसे हालात ? 54
- समाज सेवा में अग्रणी योगदान देने वाले राजेश यादव 56
- मध्यप्रदेश पर्यटन बोर्ड बना अनुभवहीन अधिकारियों का अड्डा 58
- अपना वजूद खोती मजदूर यूनियनें 60
- खतरे में पक्षियों की 1183 प्रजातियां 62
- Health Services to get Industry Status 64

कार्टूनिस्ट की नज़र में भूपेश सरकार

सत्ता का मायाजाल और सब मालामाल

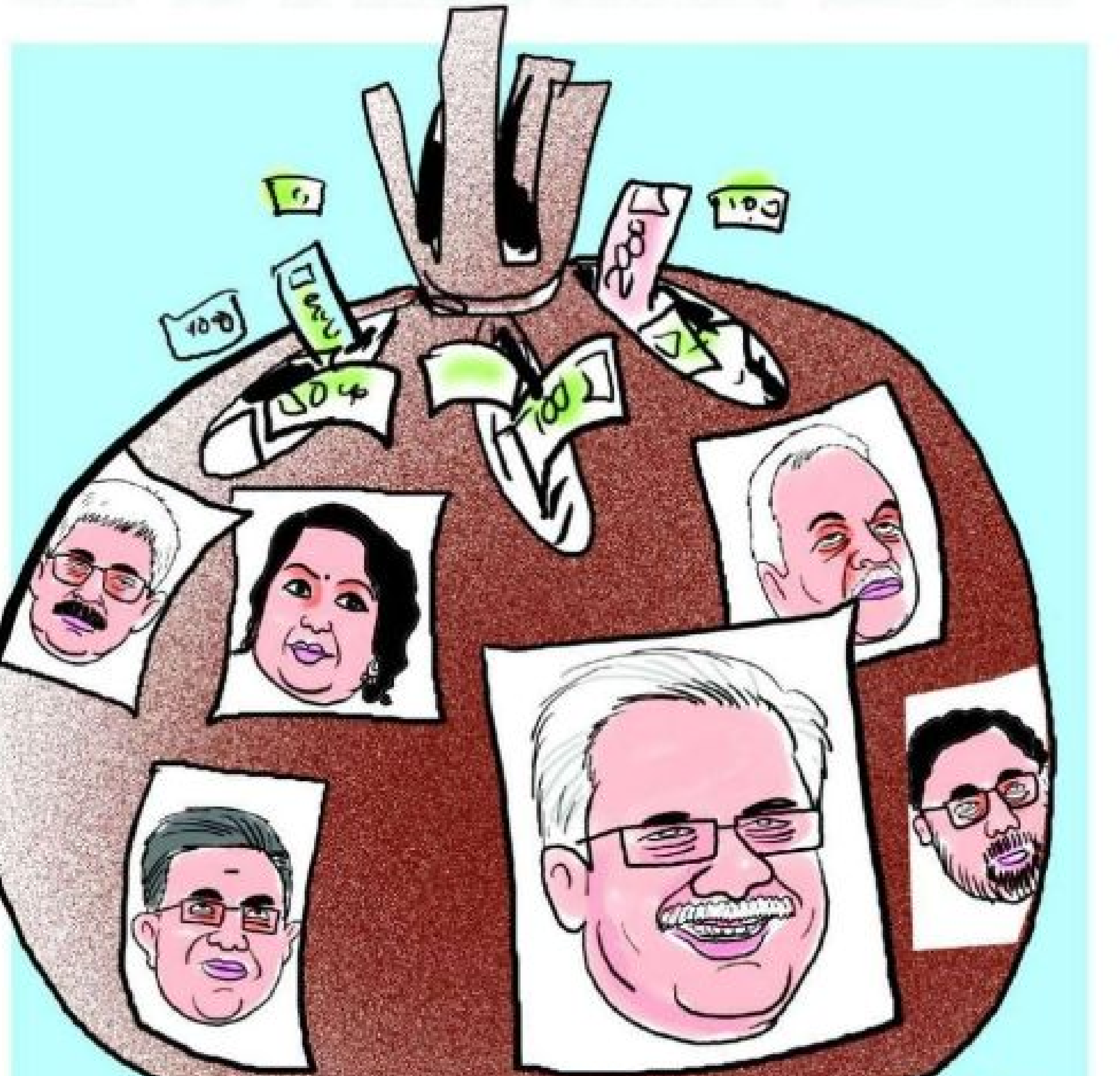

Scanned with CamScanner

संपादकीय

जनजातीय नायकों पर राजनीति नहीं होनी चाहिए

जनजातीय जननायक बिरसा मुंडा की जयंती पर लंबे समय बाद मध्यप्रदेश की धरती पर 15 नवंबर को वृहद स्तर पर जनजातीय महासम्मेलन का आयोजन किया गया। मध्यप्रदेश सरकार ने इस दिन को जनजातीय गौरव दिवस के रूप में मनाया। इस सम्मेलन में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी खुद जनजातीय लोगों से अपने मन की बात कहने भोपाल आए। राजनीतिक विशेषज्ञों की मानें तो मध्यप्रदेश सरकार के लिए यह महासम्मेलन एक तरह से आगामी विधानसभा चुनावों की तैयारियों का बिगुल है। भाजपा नेतृत्व ने साफ कर दिया है कि इस बार उसका पूरा फोकस जनजातीय क्षेत्रों में निवासरत लोगों पर है। यानि सरकार की नियत सिर्फ वोट बैंक की राजनीति पर है क्योंकि इतने साल तक इसी भाजपा सरकार ने इन्हीं जनजातीय लोगों को उपेक्षित किया है और अब वोट के लिए इन्हें मनाने की कोशिश इस महासम्मेलन के माध्यम से की जा रही है।

प्रश्न उठता है आखिरकार केंद्र की मोदी सरकार हो या राज्य की शिवराज सरकार इतने सालों तक इन सत्ताधारी नेताओं को जनजातीय लोगों की याद क्यों नहीं आई? पिछले छह-आठ महीने से दोनों ही सरकारें जरूरत से ज्यादा खुद को जनजातीय लोगों का हितैषी साबित करने में जुटी हुई हैं। आखिर क्या जनजाति के लोग सिर्फ राजनीति चमकाने भर के लिए हैं? जनजाति सम्मेलन, जनजाति आयोजन कर इनसे राजनीतिक फायदा लेने के लिए इस्तेमाल किया जाता है। यदि वाकई में इन सरकारों को इस विशेष वर्ग की चिंता है तो कुछ ऐसे प्रभावी कदम उठाया चाहिए जिससे न केवल इन्हें रोजगार के अवसर पैदा हों, इनकी संस्कृति, कला पल्लवित हो। जनजातीय लोगों के विकास और उनकी सुरक्षा जनजातीय महासम्मेलन से कैसे हो सकती है। मंच से खड़े होकर जनजातीय लोगों के हित में योजनाओं की घोषणा करना सिर्फ एक मात्र उद्देश्य शिवराज सरकार का नहीं होना चाहिए। बल्कि उनके क्षेत्रों में जाकर उनसे बात करके करीब से उनकी आवश्यकताओं और जरूरतों को सुनते-समझते और उन्हीं के बीच में इस महासम्मेलन का आयोजन करते तो निश्चित तौर पर यह महासम्मेलन सार्थक साबित होता। देश में प्रदेश में जनजातियों का बहुत बड़ा वर्ग निवास करता है जो आज भी अपनी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए दर-दर की ठोकरें खाने को मजबूर है।

निश्चित तौर पर सिर्फ महाआयोजन कर राजनीतिक पार्टियां सियासी लाभ तो ले सकती हैं लेकिन जिन उददेश्यों की बात वह करती हैं वह कभी भी ऐसे सफल नहीं हो सकते हैं। इसके लिए सरकारों को स्वार्थ से परे सोचना होना होगा।

विजया पाठक

Scanned with CamScanner

उपचुनावों में पार्टी पर नहीं उम्मीदवारों पर लगी मुहर

बीजेपी की अपेक्षा कांग्रेस का वोट प्रतिशत बढ़ा

Scanned with CamScanner

मध्यप्रदेश की दो विधानसभा सीटों पृथ्वीपुर और जोबट में और खंडवा लोकसभा सीट पर बीजेपी को जीत मिल गई है। रैगांव विधानसभा सीट से कांग्रेस को जीत मिली है। खंडवा लोकसभा सीट से बीजेपी के ज्ञानेश्वर पाटिल, पृथ्वीपुर में बीजेपी के शिशुपाल, जोबट में सुलोचना रावत और रैगांव में कांग्रेस उम्मीदवार कल्पना वर्मा चुनाव जीती हैं। मध्यप्रदेश की 01 लोकसभा और 03 विधानसभा के उपचुनाव में ऊपर से देखने में यह प्रतीत होता है कि भाजपा ने 02 विधानसभा एवं एक लोकसभा में विजय प्राप्त की है परंतु इस विजय का विश्लेषण करने पर यह लगता है भाजपा को जनता के समर्थन का स्तर गिरा है। दो स्थानों पृथ्वीपुर एवं जोबट में उसे जीतने के लिए दूसरी पार्टी के उम्मीदवारों पर निर्भर होना पड़ा। इन उपचुनावों में सभी जगह पर कांग्रेस का वोट प्रतिशत बढ़ा है और भारतीय जनता पार्टी का वोट प्रतिशत घटा है। इस उपचुनाव में बीजेपी के ऊपर सरकारी तंत्र का दुरूपयोग, धनबल से जनबल को कुचलने, बूथ कैप्चरिंग जैसे अनैतिक और आपराधिक षडयंत्र के अनेक आरोप भी लगे। शासन-प्रशासन द्वारा अनियमित्ताएं की गई। उस समय कांग्रेसियों ने आवाजें भी उठाई लेकिन ये आवाजें दबा दी गई। कांग्रेस को रैगाँव में 50.08 प्रतिशत वोट मिले हैं, जो पिछले चुनाव से 16.89 प्रतिशत अधिक हैं। कांग्रेस को खंडवा में भी 43.38 प्रतिशत वोट मिले हैं, जो पिछले चुनाव से 5.24 प्रतिशत अधिक हैं। कांग्रेस को जोबट में 42.77 प्रतिशत वोट मिले हैं, जो पिछले चुनाव से 9.24 प्रतिशत अधिक हैं। कांग्रेस को पृथ्वीपुर में 43.04 प्रतिशत वोट मिले हैं, जो पिछले चुनाव से 7.69 प्रतिशत अधिक हैं। यह सच है कि उपचुनावों के नतीजों से शिवराज सरकार की सेहत पर तो कोई असर नहीं पड़ेगा, लेकिन ये चुनाव सरकार के कामकाज को लेकर जनता के मूड का आईना जरूर होंगे। इस चुनावी दंगल में दिलचस्पी का विषय यही है कि राज्य के दो मुख्य प्रतिद्वंद्वी भाजपा और कांग्रेस अपनी सीटें बचाने और दूसरे की सीट छीनने में कामयाब हो गए हैं। इस बार भाजपा ने सामान्य सीटों पर ओबीसी कार्ड खेला, जो पार्टी की पिछड़ा वर्ग केंद्रित रणनीति का प्री-टेस्ट भी है। जहां तक चुनावी मुद्दों की बात है तो स्थानीय मुद्दे और जातिगत समीकरण ही इन चुनावों में निर्णायक हुए। वहीं दूसरी ओर इन उपचुनावों की नतीजों पर गौर करने पर लगा है कि इस बार पार्टी पर उम्मीदवारों पर मतदाताओं ने मुहर लगाई है। जब ही तो जो उम्मीदवार पार्टी छोड़कर भी गया वह भी जीता है।

विजया पाठक

मध्यप्रदेश की दो विधानसभा सीटों पृथ्वीपुर और जोबट में और खंडवा लोकसभा सीट पर बीजेपी को जीत मिल गई है। बाकी एक रैगांव विधानसभा सीट से कांग्रेस को जीत मिली है। खंडवा लोकसभा सीट से बीजेपी के ज्ञानेश्वर पाटिल, पृथ्वीपुर में बीजेपी के शिशुपाल, जोबट में सुलोचना रावत और रैगांव में कांग्रेस उम्मीदवार कल्पना वर्मा चुनाव जीती हैं। उपचुनावों के नतीजों से शिवराज सरकार की सेहत पर तो कोई असर नहीं पड़ेगा, लेकिन ये चुनाव सरकार के कामकाज को लेकर जनता के मूड का आईना जरूर होंगे। इस चुनावी दंगल में दिलचस्पी का विषय यही है कि राज्य के दो मुख्य प्रतिद्वंद्वी भाजपा और कांग्रेस अपनी सीटें बचाने और दूसरे की सीट छीनने में कामयाब हो गए हैं। इस बार भाजपा ने सामान्य सीटों पर ओबीसी कार्ड खेला, जो पार्टी की पिछड़ा वर्ग केंद्रित रणनीति का प्री-टेस्ट भी है। जहां तक चुनावी मुद्दों की बात है तो स्थानीय मुद्दे और जातिगत समीकरण ही इन चुनावों में निर्णायक हुए। इसके अलावा जोबट और पृथ्वीपुर में दलबदलू को टिकट देना भाजपा के लिए फायदेमंद रहा। कांग्रेस इन उपचुनावों को राज्य में 2023 में होने वाले विधानसभा चुनावों का सेमीफाइनल मान रही थी, जबकि भाजपा उपचुनाव के नतीजों को शिवराज सरकार के कामकाज पर जनता की मोहर के रूप में देख रही है। लिहाजा दोनों पार्टियों ने पूरी ताकत झोंक दी थी। अगर उपचुनाव में सीटों की बात करें तो जोबट विधानसभा और पृथ्वीपुर विधानसभा पर कांग्रेस का कब्जा था, वहीं रैगांव विधानसभा में बीजेपी का विधायक था। दिलचस्प बात ये है कि जोबट और पृथ्वीपुर में भाजपा ने अपनी पार्टी के किसी व्यक्ति के बजाय विपक्ष से बीजेपी में आए दो

Scanned with CamScanner

सत्ता और संघर्ष के बीच किसी

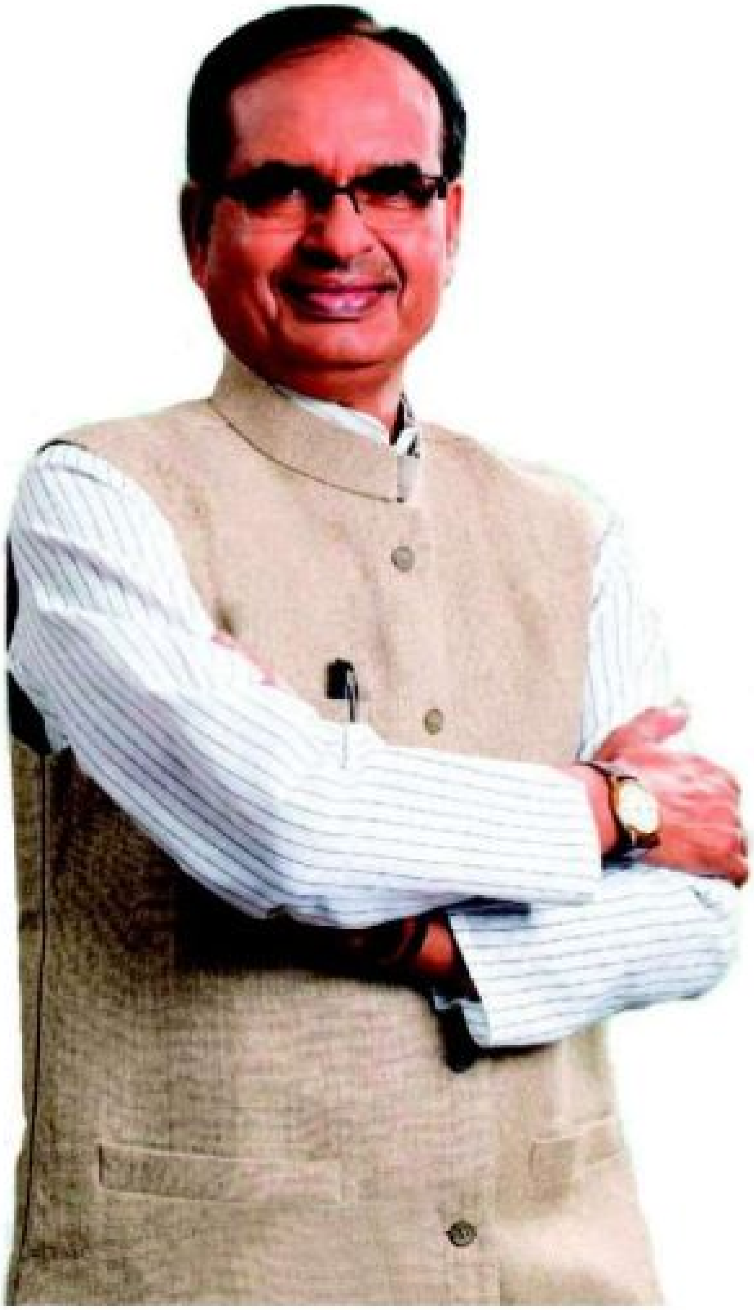

मध्यप्रदेश में हुए उपचुनावों के परिणाम आ गए हैं। परिणामों में लोकसभा और दो विधानसभा में कांग्रेस ने बाजी मारी तो एक विधानसभा में कांग्रेस ने जीत हासिल की। लेकिन सत्ता और संघर्ष के बीच बीजेपी और कांग्रेस ने इन उपचुनावों में एड़ी चोटी का जोर लगाया। किसी भी शह हुई तो किसी की मात हुई। उपचुनावों में मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान और पूर्व मुख्यमंत्री कमलनाथ केन्द्र बिन्दु में रहे। क्योंकि दोनों के लिए यह उपचुनाव प्रतिष्ठा के प्रश्न थे। हालांकि इन उपचुनावों के परिणामों से सरकार पर कोई फर्क नहीं पड़ने वाला था। लेकिन फिर भी दोनों पार्टियों ने चुनाव प्रचार से लेकर मेनेजमेंट तक खूब जोर

दलबदलुओं को अपना प्रत्याशी बनाकर मैदान में उतारने का विकल्प चुना। वहीं लोकसभा में अपने सिटिंग एमपी के निधन के बाद उनके बेटे को टिकिट ना देते हुए अन्य व्यक्ति को चुना। चुनाव में जीत सुनिश्चित करने के उद्देश्य से सीएम के अलावा बीजेपी प्रदेश अध्यक्ष वीडी शर्मा, केंद्रीय मंत्री नरेंद्र तोमर और ज्योतिरादित्य सिंधिया सहित 40 विधायकों और 12 मंत्रियों को चुनाव प्रचार के लिए तैनात किया था। उपचुनावों में

Scanned with CamScanner

की शह और किसी की मात

आजमाईश की। जिसके सकारात्मक परिणाम भी निकले। कांग्रेस ने जहां पिछले चुनाव की अपेक्षा इस बार अपना वोट प्रतिशत बढ़ाया वहीं बीजेपी ने कांग्रेस से दो सीटें छीन ली। कुल मिलाकर बहुत अच्छा लगा कि कांग्रेस और बीजेपी इस छोटे चुनाव में भी पूरी तैयारी के साथ मैदान में उतरे। कांग्रेस ने मुद्दों को उछाला, सत्ताधारी सरकार को आईना दिखाया। वहीं शिवराज सरकार ने अपनी सरकार की उपलब्धियों को भुनाया। फिलहाल उपचुनाव के नतीजे भले ही कुछ भी निकले हो लेकिन इतना तो तय है कि आने वाले 2023 में विधानसभा चुनाव में दोनों प्रमुख पार्टियों के बीच मुकाबला दिलचस्प होगा।

कांग्रेस और बीजेपी के बीच सीधा मुकाबला रहा। इस मुकाबले में कांग्रेस न महंगाई को मुद्दा बना सकी और न ही बीजेपी अपने मूल कार्यकर्ता की नाराजगी को पूरी तरह समाप्त कर सकी।

साल भर के भीतर मध्यप्रदेश में यह तीसरी बार है जब उपचुनाव हुए। पिछले साल दिवाली से पहले 28 सीटों के विधानसभा उपचुनाव हुए थे। इसके बाद दमोह में विधानसभा का उपचुनाव हुआ।

Scanned with CamScanner

कांग्रेस से नेताओं का मोहभंग

साजिश या सत्ता का मोह

सुलोचना रावत

सचिन बिरला

प्रदुम्न सिंह लोधी

सुमित्रा कासडेकर

पिछल कुछ महीनों से देखा जा रहा है कि कई कद्दावर कांग्रेसी पार्टी छोड़कर बीजेपी मे शामिल हो रहे हैं। इन कद्दावर कांग्रेसियों मे कोई सिटिंग एमएलए है तो कोई क्षेत्र का प्रभावशाली नेता है। आखिर सवाल उठता है कि क्यों इन नेताओं का कांग्रेस से मोहभंग हो रहा है? इस बात पर मंथन करने पर कई कारण भी नजर आ रहे हैं। पहला कारण तो यह स्पष्ट हो रहा है। जो भी नेता कांग्रेस को छोड़ रहा है वह सत्ता के लालच में जा रहा है। उसे बीजेपी कई तरह के लालच या लोभ देकर अपनी ओर आकर्षित कर रही है। इसमें बीजेपी के अपने स्वयं के नफा-नुकसान छुपे हैं। वह अपनी सत्ता के हिसाब से ऐसा कर रही है। वहीं कांग्रेस छोड़कर जाने वाले जो भी नेता हैं वह सत्ता के लोभ में पार्टी के द्वारा दिए गए पदों या शक्तियों को भूल गए हैं। ऐसा भी नहीं है कि कोई नेता कांग्रेस पार्टी से उपेक्षित होकर गया हो जिसे उसके हिसाब से पद या शक्ति नहीं दी गई हो। लेकिन इन्होंने पार्टी द्वारा किए उपकारों को तिलांजलि देते हुए शार्टकट का रास्ता अपनाया और एक झटके में पार्टी को बाय-बाय कर दिया। इनके ताजा उदाहरण हम इन उपचुनावों में भी देख चुके हैं। दूसरे कारण से भी इंकार नहीं किया जा सकता है। जो यह है कि आजकल प्रदेश कांग्रेस पार्टी में अंदरूनी खींचतान बहुत चल रही है। कौन नेता किसकी ओर है और कौन किसकी टांग खींच रहा है, यह कोई समझ ही नहीं सकता है। खासकर पूर्व मुख्यमंत्री कमलनाथ को लेकर खूब साजिशें की जा रही हैं। ज्यादातर कांग्रेसियों की चाल है कि ऐन-केन प्रकारेण कमलनाथ को कमजोर किया जाए। जिसके लिए साजिशकर्ता किसी भी हद तक जाने को तैयार हैं। वर्तमान में हुए उपचुनावों में भी यह साजिशें खूब देखने को मिली। यही कारण रहा कि उपचुनावों में कमल के सामने केवल कमलनाथ ही लड़ते दिखाई दिए। ज्यादातर कांग्रेसी तो कमलनाथ को कमजोर करने में लगे रहे। इस तरह की साजिशों से भी इंकार नहीं किया जा सकता है। यह भी सच है कि साजिशों का सूत्रधार बीजेपी है। बीजेपी के कहने पर ही कुछ कांग्रेस दिग्गज इस साजिश में लगे हैं। यह कांग्रेसी नेता कांग्रेस को तो कमजोर कर ही रहे हैं वहीं बीजेपी को भी मजबूती प्रदान कर रहे हैं। हो सकता है कि इन्हें बीजेपी की ओर से लोभ लालच दिया गया हो लेकिन कहीं न कहीं आखिर कमजोर तो उनकी ही पार्टी हो रही है। मध्यप्रदेश कांग्रेस पार्टी के कुल 25 विधायक भाजपा में जा चुके हैं, पार्टी की अंदरूनी उठापटक के बीच कई पदाधिकारियों ने इस्तीफ़े दिए हैं।

भारतीय जनता पार्टी के लिए यह सभी उपचुनाव किसी बड़ी चुनौती से कम नहीं रहे थे। मुख्यमंत्री सहित पूरी सरकार और पार्टी का संगठन इन चुनावों को एक युद्ध की तरह लड़ रहा था। वैसे मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान की शैली आक्रामक ढंग से चुनाव लड़ने की है। चौहान ने अपनी चिर-परिचित रणनीति के तहत भूमिहीन को जमीन देने का मुद्दा जमकर उछाला। इस बार के चुनाव परिणाम में कुछ मैसेज बहुत क्लियर दिए हैं। जनता किसी पार्टी को नहीं प्रत्याशी को भी देखती है। बड़े नेता अपने निर्णय थोप नहीं सकते। सीएम शिवराज सिंह के गलत डिसीजन के कारण रैगांव विधानसभा सीट हाथ से निकल गई। मतलब साफ है कि अब

Scanned with CamScanner

अब एक और उपचुनाव की ओर ढकेला जाएगा मध्यप्रदेश

लगता है मध्यप्रदेश और उपचुनाव का चोली दामन का साथ हो गया है। कभी लोकसभा तो कभी विधानसभा के उपचुनाव समय-समय पर मध्यप्रदेश में होते रहे हैं। पिछले कुछ वर्षो से तो कोई ऐसा समय नही बीता जब प्रदेश में कोई लोकसभा या विधानसभा की सीट खाली न रही हो। इसी बीच खाली सीट पर राजनीति की खिंचड़ी पकती रही। दलबदलू की यही परंपरा इस कारण से ही प्रदेश खूब पली और बढ़ी है। इन उपचुनावों के कारण हमने कमलनाथ की सरकार को गिरते हुए और शिवराज को मुख्यमंत्री बनते देखा है। ताजा उपचुनाव अब बड़वाह विधायक सचिन बिरला का कांग्रेस छोड़कर बीजेपी में जाने के कारण होना है। आने वाले समय में निश्चित रूप से इस सीट पर भी उपचुनाव होना है। दल बदलू की इस परंपरा पर रोक का इन राजनेताओं के पास कोई तोड़ नही है। इन नेताओं को कोई फर्क नहीं पड़ता कि इस कारण से उस क्षेत्र का और क्षेत्रवासियों का कितना नुकसान होता है। उस क्षेत्र का पूरा विकास रूक जाता है। वहीं जब चुनाव होते हैं तो प्रदेश के लोगों की खून पसीने की कमाई खर्च होती है। लेकिन इस बात से किसे फर्क पड़ता है। 2020 में बड़े स्तर पर दल बदल के कारण पूरी राजनीति ही प्रभावित हो गई। सरकार गिर गई। कोई एक साल तक प्रदेश में सत्ता का संग्राम चलता रहा और प्रदेश एक अस्थिरता में चला गया। न कोई विकास हुआ और न प्रशासन ढंग से चला। 06 महीना तो चुनाव आचार संहिता लगी रही। जिस कारण और सभी कार्य ठप्प रहे। इस तरह उपचुनावों की गलत परंपरा या नीति पर विचार होना चाहिए। राजनीतिक पार्टियों को भी इस पर गंभीरता से सोचना चाहिए।

पार्टी कोई मायने नहीं रखती है जो नेता क्षेत्र में अच्छा काम करता है, जिसकी छवि अच्छी है वह चुनाव में जीत हासिल कर सकता है। इस बार के उपचुनावों के परिणामों में यही देखने को मिला है।

यूं तो बीजेपी की परंपरा रही है कि वो पंचायत और नगर निगम का लोकल चुनाव भी पूरे तामझाम और सिस्टम के साथ लड़ती है। उपचुनाव में बीजेपी के आक्रामक अंदाज़ को भी इसी रणनीति से जोड़ा जा सकता है।

लेकिन कुछ तो था, जो इस बार मध्यप्रदेश के उपचुनावों में अलग था। इस मायने में भी कांग्रेस पिछले साल हुए 28 सीटों के उपचुनाव हार गई थी और उसका मोराल डाउन था, लेकिन बीजेपी इस तथ्य के

Scanned with CamScanner

तीन विधानसभा और एक लोकसभा सीट

आखिर कांग्रेस क्यों हारी खंडवा सीट?

खंडवा लोकसभा सीट पर कांग्रेस की दावेदारी मजबूत मानी जा रही थी। क्योंकि इस सीट से कांग्रेस कई बार जीत चुकी है। अरूण यादव के करीबी सचिन बिरला का उपचुनाव से पहले भाजपा में शामिल होना कहीं सोची समझी साजिश तो नहीं? कहीं कमलनाथ को परेशान करने के लिए कांग्रेसी नेताओं ने ही तो नहीं रचा मायाजाल? क्या सचिन बिरला के भाजपा में शामिल होने के सूत्रधार है अरूण यादव? यह ऐसे सवाल हैं जिनकी हकीकत से इंकार नहीं किया जा सकता है। क्योंकि जो कुछ भी घटा है उसका अंदेशा पहले से ही लगाया जा रहा था। जगत विजन ने सूत्रों के हवाले से कुछ सप्ताह पहले ही इस बात को साफ कर दिया था कि खंडवा के लोकप्रिय नेता और वरिष्ठ कांग्रेसी नेता अरूण यादव भाजपा के वरिष्ठ नेताओं और पदाधिकारियों के संपर्क में हैं। सचिन बिरला अरूण यादव खेमे के नेता माने जाते हैं और उनका उपचुनाव के पहले इस तरह से भाजपा में शामिल होना निश्चित ही कांग्रेस में चल रही अंर्तकलह को साबित करता है। राजनीतिक सलाहकारों की मानें तो सचिन बिरला एक जुझारू नेता हैं और वे अपनी विधानसभा के अलावा अन्य विधानसभा क्षेत्रों में भी अच्छा दखल रखते हैं। इसका सीधा फायदा भारतीय जनता पार्टी को उपचुनाव में देखने को मिला।

एक साल पहले भी भाजपा ने की थी कोशिश

सूत्रों की मानें तो लगभग डेढ़ साल पहले जिस समय भारतीय जनता पार्टी विपक्ष में थी। उस समय भी भाजपा नेताओं ने सचिन बिरला को भाजपा में शामिल करने की कोशिश की थी। इसके बदले भाजपा ने सचिन को 50 करोड रूपए और कैबिनेट में मंत्री पद देने का ऑफर किया था। लेकिन तत्कालीन परिस्थितियों को देखते हुए भाजपा की यह कोशिश नाकाम रही और सचिन ने भाजपा का दामन थामने से इंकार कर दिया था। जिस तरह से मध्यप्रदेश में कांग्रेस विधायक एक के बाद एक भाजपा को ज्वॉइन करते जा रहे हैं, उससे कमलनाथ गफलत में पड़ गए हैं। उन्हें समझ ही नहीं आ रहा है कि ऐसा क्यों हो रहा है। कहीं ऐसा तो नहीं कि प्रदेश के कांग्रेसी नेता कमलनाथ को यहां जमने न देना चाहते हों इसीलिए कांग्रेस पार्टी के अंदर अंर्तकलह पैदा किए हुए हैं।

बावजूद एक लोकसभा और दो विधानसभा सीटें जीतने में कामयाब रही। पहले इस अवधारणा के समर्थन में तथ्य पर गौर कर लेते हैं कि उपचुनाव वाली विधानसभा की तीन में से दो सीटों पर बीजेपी ने ऐसे उम्मीदवारों को टिकट दिया था, जो चुनाव के

Scanned with CamScanner

का लेखा-जोखा : कौन कितने पानी में

क्या सहानभूति बटोर रहे थे यादव?

कांग्रेस की टिकट पर खंडवा सीट के प्रबल दावेदार माने जा रहे पूर्व प्रदेश कांग्रेस अध्यक्ष अरुण यादव ने उम्मीदवार के नाम की घोषणा होने के कुछ दिन पूर्व ही चुनाव न लड़ने का फैसला लेकर सबको चौंका दिया था। यादव ने चुनाव न लड़ने का फ़ैसला तो किया लेकिन उन्होंने कोई कारण नही बताया। जिसके कारण राजनीतिक गलियारे में अलग अलग तरह की बातें शुरू हो गई। अरुण यादव के इस फैसले ने लोगों के मन में कई सवालों को जगह दे दी। जिसके जवाब जनता, मीडिया, राजनीति से जुड़े लोग सहित खुद कांग्रेस अलाकमान भी ढूंढने में लगी हुई है। विश्वस्त सूत्रों से मिली जानकारी के अनुसार अरुण यादव खंडवा लोकसभा सीट से अपनी जीत को सुनिश्चित मान रहे थे। कांग्रेस के लिए खंडवा जिले से ओबीसी उम्मीदवार का यह चेहरा बहुत सक्रिय और लोकप्रिय है। यही वजह है कि अरुण यादव ने इस बात का फायदा उठाते हुए पार्टी के सामने कुछ ऐसी शर्त रख दीं कि पार्टी को अरुण यादव के सामने हाथ जोड़ लेने पड़े। सूत्रों का कहना था कि उन्होंने चुनाव लड़ने के बदले पार्टी से करोड़ों रुपए की मांग की, इतना ही नहीं आगामी विधानसभा चुनाव के दौरान पूरे क्षेत्र में अपने 10 से अधिक करीबियों को विधानसभा चुनाव का टिकट दिये जाने की बात कही और तो और उन्होंने यह तक कह दिया कि अगर वे उपचुनाव हार जाते हैं तो कांग्रेस पार्टी उनके ऊपर हार का ठीकरा न फोड़े। यानि कुल मिलाकर चिट भी अपनी पट भी अपनी। एक सक्रिय राजनेता होकर अपनी पार्टी के खिलाफ इस तरह के खुलकर खड़े होना साफतौर पर यह माना जा रहा है कि अरुण यादव का कांग्रेस पार्टी से मोहभंग हो गया है। वे भी ज्योतिरादित्य सिंधिया के राह पर चलते हुए पंजे को अगूंठा दिखा कर कमल का दामन थाम सकते हैं।

वर्ष	प्रत्याशी का नाम	पार्टी	स्थान	वोट	वोट दर (प्रति. में)	मार्जिन	मार्जिन दर (प्रति. में)
2021	ज्ञानेश्वर पाटिल	भाजपा	विजेता	6,32,455	49.8	81,383	6.5
	राजनारायण सिंह पुरनी	कांग्रेस	उपविजेता	550315	43.3		
2019	नंद कुमार सिंह चौहान	भाजपा	विजेता	8,38,909	57	2,73,343	18
	अरुण यादव	कांग्रेस	उपविजेता	5,65,566	39		
2014	नंदकुमार सिंह चौहान	भाजपा	विजेता	7,17,357	58	2,59,714	21
	अरुण सुभाष चंद्र यादव	कांग्रेस	उपविजेता	4,57,643	37		
2009	अरुण सुभाषचंद्र यादव	कांग्रेस	विजेता	3,94,241	49	49,081	7
	नंदकुमार सिंह चौहान	भाजपा	उपविजेता	3,45,160	42		
2004	नंद कुमार सिंह चौहान	भाजपा	विजेता	3,36,724	56	1,02,737	17
	अमिताभ मंडलोई	कांग्रेस	उपविजेता	2,33,987	39		
1999	नंदकुमार सिंह चौहान	भाजपा	विजेता	3,64,161	59	1,26,103	21

ऐन पहले बीजेपी में शामिल हुए हैं। पार्टी काडर को दरकिनार करते हुए बीजेपी ने जिताऊ उम्मीदवार की तलाश में जोबट से कांग्रेस की नेता सुलोचना रावत को पहले बीजेपी में शामिल कराया और पार्टी में आने के एक सप्ताह के भीतर ही उन्हें उम्मीदवार

Scanned with CamScanner

खुद को उपेक्षित महसूस कर रहे थे यादव

देखा जाए तो अरुण यादव सहित भाजपा के नेता अरुण यादव के पक्ष में कांग्रेस से असंतुष्ट होने का माहौल बना रहे थे। चाहे भूपेंद्र सिंह हो या फिर कोई अन्य नेता। आलम यह है कि खुद अरुण भी कार्यकर्ताओं के बीच जाकर उनके साथ हुई नाइंसाफी जैसा माहौल बनाने में जुटे। पिछले दिनों बुरहानपुर में आयोजित एक सभा में अरुण यादव ने कहा था कि कांग्रेस पार्टी ने उन्हें बहुत कुछ दिया है, पार्टी उन्हें हर बार जो निर्देश देती है वह उसका पालन करते हैं। हर बार फसल मैं उगाता हूं, लेकिन उस फसल को काटकर कोई और ले जाता है। 2018 में भी ऐसा ही हुआ था, 2018 में फसल मैंने उगाई, पार्टी आलाकमान ने कहा किसी और को दे दो, तो मैंने अपनी फसल दे दी। क्योंकि फसल हम फिर उगा लेंगे। इस तरह की बयानबाजी से वो खुद को साफ बताते हुए कार्यकर्ताओं से सहानुभूति बोटरने का कार्य कर रहे थे। जिसका ही नतीजा है कि आज खंडवा सीट पर भाजपा के ज्ञानेश्वर पाटिल का कब्जा हो गया है। उन्होंने कांग्रेस के राजनारायण सिंह पुरनी को लगभग 81 हजार वोटों से हराया है। साल 2014 के चुनाव में इस सीट पर भारतीय जनता पार्टी के नंदकुमार सिंह चौहान ने कांग्रेस के उम्मीदवार अरूण यादव को हराया था।

ये हैं सचिन बिरला, जो खण्डवा लोकसभा सीट पर हुए उपचुनाव के ठीक पहले कांग्रेस को छोड़ कर बीजेपी में शामिल हो गए। यह उस समय बीजेपी में शामिल हुए जब खण्डवा में चुनाव प्रचार जोर पर था। इनके पार्टी छोड़ने से कांग्रेस को काफी नुकसान भी हुआ।

फीलगुड में बीजेपी, कांग्रेस को मंथन की जरूरत

भी बना दिया। इसी तरह निवाड़ी जिले की प्रथ्वीपुर सीट से बीजेपी ने पिछले चुनावों में समाजवादी पार्टी के टिकट पर चुनाव लड़ चुके शिशुपाल यादव को उम्मीदवार बनाया। यह दोनों ही सीटें 2018 में कांग्रेस के खाते में गई थी और दोनों की जगह पर जीते कांग्रेस के विधायकों ब्रजेंद्र सिंह राठौर और कलावती भूरिया के कोरोना से हुए निधन के बाद खाली हुई थीं। दोनों जगह मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान की पहल पर ही इन उम्मीदवारों को टिकट मिला। इसी तरह खंडवा लोकसभा उपचुनाव में इस बार बीजेपी ने ज्ञानेश्वर पाटिल को टिकट देकर इस सीट से सांसद रहे नंदकुमार सिंह चौहान के परिवार की दावेदारी को अनदेखा किया। हालांकि यहां सीएम की पसंद हर्षवर्धन चौहान को ही माना जा रहा था, लेकिन लगता है विधानसभा उपचुनाव की बाकी सीटों पर सीएम की पसंद के उम्मीदवार दिए जाने के चलते यहां सीएम की मर्जी से इतर पाटिल को मौका मिल गया।

इस नई परंपरा के मायने क्या हैं? क्यों बीजेपी ने उपचुनाव में अपने स्थानीय नेता और काडर के मुकाबले बाहरी उम्मीदवारों को टिकट के लायक समझा? क्यों सीएम ने तीन विधानसभा उपचुनावों को अपनी नाक का सवाल बना लिया था? इसे समझने के लिए पिछले तीन साल में मध्यप्रदेश की

Scanned with CamScanner

चार दिन पहले बदली पार्टी और जोबट से जीत गईं सुलोचना

मध्यप्रदेश के अलीराजपुर जिले की जोबट विधानसभा सीट पर भाजपा प्रत्याशी सुलोचना रावत ने 06 हजार 104 वोटों से जीत हासिल की। जोबट विधानसभा सीट से सुलोचना रावत दल बदल के बाद भी जीतीं। इससे लगता है कि चुनाव प्रत्याशी जीतते हैं न कि पार्टी जीतती है। क्षेत्र में उनकी लोकप्रियता ही नेता को चुनाव जिताती है। बता दें कि इस चुनाव से ठीक पहले सुलोचना रावत कांग्रेस का हाथ छोड़कर भाजपा के साथ चली गई थीं। सुलोचना चौथी बार एमएलए बनी हैं। उन्होंने कांग्रेस के महेश पटेल को हराया है। आदिवासी बहुलता वाले जोबट में जीत हासिल करना भाजपा के लिए काफी बड़ी बात है। अभी तक यह सीट कांग्रेस का गढ़ मानी जाती रही है। सन 1996 से लगातार सुलोचना रावत का कब्जा बरकरार है। 2018 के विधानसभा चुनाव में कांग्रेस ने सुलोचना रावत की जगह कलावती भूरिया को टिकट दिया था और वह चुनाव जीत भी गई थी। कलावती भूरिया के निधन के बाद जब कांग्रेस ने सुलोचना रावत को महत्व नहीं दिया तो सुलोचना रावत कांग्रेस पार्टी छोड़कर भारतीय जनता पार्टी में शामिल हो गई और चुनाव के मात्र 04 दिन पहले पार्टी बदलने के बावजूद 2021 का उपचुनाव जीत गई। हालांकि पूर्व मुख्यमंत्री कमलनाथ जोबट से सुलोचना रावत को टिकिट देने के पक्ष में थे लेकिन परिस्थितियां ऐसी निर्मित हुई या निर्मित कराई गई कि सुलोचना का टिकिट काटना पड़ा। जोबट सीट का रिजल्ट बीजेपी के लिए 2023 के आम चुनाव के लिहाज से भी मायने रखता है।

वर्ष	उम्मीदवार का नाम	पार्टी	स्थान	कुल वोट	वोट प्रतिशत	मार्जिन
2021	सुलोचना रावत	भाजपा	विजेता	68,949	46.92	6,104
	महेश रावत पटेल	कांग्रेस	दूसरे स्थान पर	62,845	42.77	
2018	श्रीमती कलावती भूरिया	कांग्रेस	विजेता	46,067	34	2,056
	माधो सिंह डावर	भाजपा	दूसरे स्थान पर	44,011	32	
2013	मधोसिंह दावर	भाजपा	विजेता	45,793	40	11,051
	विशाल रावत	कांग्रेस	दूसरे स्थान पर	34,742	31	
2008	सुलोचना रावत	कांग्रेस	विजेता	35,453	45	4,560
	दावर माधो सिंह	भाजपा	दूसरे स्थान पर	30,893	39	
2003	राजनारायण सिंह पुरनी	कांग्रेस	विजेता	33,464	32	5,067
	कुंवर नरेंद्र सिंह तोमर	भाजपा	दूसरे स्थान पर	28,903	28	

राजनीति में हुए सियासी घटनाक्रम और समीकरणों के बदलाव को देखना होगा। 2018 में बीजेपी की सत्ता से विदाई हुई तो अगले 05 साल तक वापसी की उम्मीद नहीं थी लेकिन अप्रत्याशित तौर पर ज्योतिरादित्य सिंधिया का बीजेपी में शामिल होना और

Scanned with CamScanner

सपा से बीजेपी में आए शिशुपाल जीते पृथ्वीपुर

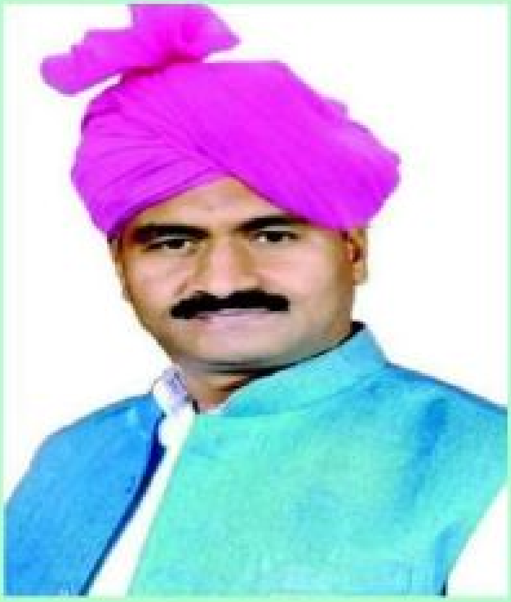

निवाड़ी जिले की पृथ्वीपुर से विधानसभा सीट पर भाजपा प्रत्याशी शिशुपाल यादव ने कांग्रेस के प्रत्याशी नितेंद्र सिंह राठौर को करीब 16 हजार मतों से पराजित किया। पृथ्वीपुर विधानसभा सीट मध्यप्रदेश की महत्वपूर्ण विधानसभा सीट है, जहां 2018 में कांग्रेस ने जीत दर्ज की थी। 2018 में पृथ्वीपुर में कुल 35 प्रतिशत वोट पड़े। 2018 में कांग्रेस से ब्रजेंद्र सिंह राठौर 08 वोटों के मार्जिन से जीते थे। यहां भी कभी सपा में रहे शिशुपाल सिंह यादव ने जीत हासिल की है। कुछ समय पहले ही शिशुपाल सिंह बीजेपी में आए हैं। बीजेपी ने उन्हें ही टिकिट देकर जिताउ उम्मीदवार पर दांव खेला और यह दांव सफल रहा।

वर्ष	उम्मीदवार का नाम	पार्टी	स्थान	कुल वोट	वोट प्रतिशत	मार्जिन
2021	डॉ. शिशुपाल यादव	भाजपा	विजेता	82,673	53.12	15,687
	नितेंद्र सिंह राठौर	कांग्रेस	दूसरे स्थान पर	66,986	43.04	
2018	ब्रजेंद्र सिंह राठौर	कांग्रेस	विजेता	52,436	35	7,620
	शिशुपाल सिंह	सपा	दूसरे स्थान पर	44,816	30	
2013	अनीता सुनील नायक	भाजपा	विजेता	51,147	39	8,627
	ब्रजेंद्र सिंह राठौड़	कांग्रेस	दूसरे स्थान पर	42,520	32	
2008	ब्रजेन्द्र सिंह	कांग्रेस	विजेता	35,062	35	5,239
	सुनील नायक	भाजपा	दूसरे स्थान पर	29,823	30	

परिणामों का पंचायत चुनावों पर होगा असर

मुद्दों पर भारी मैनेजमेंट

उनके साथ आए विधायकों की वजह से कमलनाथ सरकार का तख्तापलट होना, एमपी की राजनीति के कई समीकरण बदल गया। शिवराज सिंह चौहान फिर से सीएम बने और इसके बाद हुई 28 सीटों के उपचुनाव में बीजेपी की जीत से सरकार सुरक्षित बहुमत में भी आ गई। इस पूरे घटनाक्रम के बीच बीजेपी की अंदरूनी राजनीति के समीकरण भी बदले हैं। सिंधिया की एंट्री ने बीजेपी की भीतरी राजनीति में एक और गुट खड़ा कर दिया है। सिंधिया के साथ कांग्रेस से टूटने वाले 22 विधायकों के बाद अगर गौर करें तो करीब 10 और विधायक रहे हैं, जो कांग्रेस से छोड़कर बीजेपी में शामिल हुए हैं। इसके मायने इस तरह निकाले जा सकते हैं कि बीजेपी या यूं कहें कि शिवराज सिंह चौहान बिल्कुल नहीं चाहते कि उनकी यह सरकार सिंधिया समर्थक

Scanned with CamScanner

रैगांव से कांग्रेस को मिली संजीवनी, अब बदलेंगे सियासी समीकरण

रैगांव विधानसभा को कांग्रेस की कल्पना वर्मा ने 12,290 मतों से फतह कर लिया। लेकिन यह जीत न केवल रैगांव तक सीमित रहेगी बल्कि इसका असर जिले की राजनीति पर पड़ने वाला है। इसका पूरे विन्ध्य में एक संदेश जाएगा इससे भी इंकार नहीं किया जा सकता है। इस नतीजे से जहां भाजपा सकते में है। वहीं रैगांव की जीत ने कांग्रेस में एक नया आत्म विश्वास तो जगाया ही है। साथ ही यह भी सबक दिया है कि एकसूत्र में अगर कांग्रेस चुनाव मैदान में उतरती है तो नतीजे उसके पक्ष में आते हैं। गुटों में बंटी रहने वाली कांग्रेस इस पूरे चुनाव में एकजुट नजर आई और कहीं भी किसी ने विरोध का झंडा नहीं उठाया। उधर भाजपा चुनाव के शुरुआती दौर से भितरघात और जातीय राजनीति के चंगुल में जो फंसी तो अंत तक नहीं उबर पाई। भाजपा का स्थानीय संगठन भी निष्प्रभावी रहा या कहा जा सकता है कि संगठन ज्यादातर पार्टी के पक्ष में खड़ा नजर नहीं आया। यह सभी स्थितियां न केवल भाजपा के लिये भी सबक हैं बल्कि 2023 के लिये आत्म विश्लेषण का बड़ा विषय है। गौरतलब है कि यहां पर मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान समेत तमाम दिग्गजों ने जमकर कैंपेनिंग की थी। इसके बावजूद भाजपा को यहां पर हार का सामना करना पड़ा है।

वर्ष	उम्मीदवार का नाम	पार्टी	स्थान	कुल वोट	वोट प्रतिशत	मार्जिन
2021	कल्पना वर्मा	कांग्रेस	विजेता	72,989	50.80	12,290
	प्रतिमा बागरी	भाजपा	दूसरे स्थान पर	60,699	42.25	
2018	जुगल किशोर बागरी	भाजपा	विजेता	65,910	45	17,421
	कल्पना वर्मा	कांग्रेस	दूसरे स्थान पर	48,489	33	
2013	ऊषा चौधरी	बसपा	विजेता	42,610	36	4,109
	पुष्पराज बागरी	भाजपा	दूसरे स्थान पर	38,501	32	
2008	जुगल किशोर	भाजपा	विजेता	31,936	32	3,851
	उषा चौधरी	बसपा	दूसरे स्थान पर	28,085	28	
2003	जुगल किशोर	भाजपा	विजेता	31,389	32	9,988
	उषा	बसपा	दूसरे स्थान पर	21,401	22	

विधायकों की बैसाखी पर टिकी नज़र आए, साथ ही वो सरकार में अपने समर्थक विधायकों की संख्या बढ़ाने में भी कामयाब हुए हैं। इस चुनाव में भी अगर बीजेपी को तीनों विधानसभा की सीटों पर हार मिलती तो भी सरकार की सेहत पर कोई असर नहीं

Scanned with CamScanner

शिवराज सिंह चौहान के लिए उपचुनावों में क्या हैं जीत के मायने?

मध्यप्रदेश में सत्ता परिवर्तन की चर्चा है, सत्तारूढ़ बीजेपी ने पड़ोसी राज्य गुजरात, उत्तराखंड और कर्नाटक में अपने मुख्यमंत्रियों को बदल दिया है और मध्यप्रदेश के मुख्यमंत्री को बदलने की चर्चाएं सत्ता के गलियारों में प्रमुखता के साथ चल रही हैं। कयास लगाए जा रहे हैं कि आजकल या अगले महीनों में मध्यप्रदेश के सीएम को बदला जा सकता है, ऐसे समय में मध्यप्रदेश में तीन विधानसभा और एक लोकसभा सीट पर उपचुनावों के परिणामों के मायने थे। बहरहाल चुनाव के मायने कुछ भी हों, लेकिन एक बात इस उपचुनाव की सबसे खास है और वो यह कि मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान इस उपचुनाव के ज़रिए अपने केंद्रीय नेतृत्व और अपने प्रदेश के अन्य बीजेपी नेताओं को अपना लोहा मनवाने में जुटे हुए थे। सीएम शिवराज सिंह चौहान ने 01 महीने के अंदर लगभग 60 बैठकें, 40 छोटी बड़ी सभाएं की थी और उन्होंने 20 रैलियों को संबोधित किया था। इसके अलावा वो पांच बार ग्रामीणों के बीच जाकर उनके सुख-दुख में शामिल हुए। जहां एक तरफ मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान अपने चिर परिचित अंदाज में धुंआधार प्रचार में लगे हुए थे। इस तरह पूरा चुनाव तीन एक पर सिमट कर शिवराज सिंह चौहान की लोकप्रियता और दबदबा को बता गया कि चुनाव जीतने के लिए बीजेपी के पास इतने सालों बाद भी शिवराज सिंह से बेहतर कोई नेता नहीं है। इसलिए उनके मुख्यमंत्री पद से बदले जाने की अटकलें लगाने वाले अब कुछ दिन तक फिर अपना विश्लेषण बंद रखेंगे। उधर कांग्रेस को फिर सोचना होगा कि बीजेपी की गहरी जड़ों को किस तरह वो उखाड़ कर मध्यप्रदेश में अपनी वापसी का रास्ता बनाएं। भाजपा के भीतर इस मुद्दे पर खलबली मची हुई है कि दूसरे दलों से आए नेताओं की पूछपरक पार्टी में ज्यादा हो रही है। पार्टी के नेता कार्यकर्ताओं की नाराजगी को यह कहकर ढंकने की कोशिश करते रहे कि व्यापक जनाधार के लिए किए जा रहे प्रयास को कार्यकर्ता समझता है।

मध्यप्रदेश के चार उपचुनावों में आए परिणाम ने एक बार फिर मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान को बीजेपी में नई ऊंचाई दे दी। एक लोकसभा और तीन विधानसभा में हुए ये चुनाव शिवराज सिंह ने अपने उम्मीदवार और फिर उनके लिए किए गए ज़बरदस्त प्रचार के दम पर जीते। खंडवा लोकसभा में बीजेपी की बढ़त पिछले चुनाव के मुकाबले कम रही मगर एक सामान्य नए उम्मीदवार को मैदान में उतार कर बीजेपी ने सहानुभूति से चुनाव जीतने के बजाय अपने दम ख़म और संगठन के दम पर जीतने की सोची और उनको जीत मिली। शिवराज सिंह चौहान का कहना है कि आदिवासी इलाकों में बीजेपी सरकार की नीतियों और योजनाओं की जीत है। पिछला चुनाव बीजेपी के प्रत्याशी ने पौने तीन लाख के अंतर से जीता था तो इस चुनाव में वो लीड घटकर अस्सी हज़ार के आसपास आ गई। विधानसभा के तीन चुनावों में शिवराज सिंह चौहान सबसे बड़ी जीत अलीराजपुर जिले की जोबट सीट पर मान रहे हैं। यहां बीजेपी ने कांग्रेस की दो बार की विधायक सुलोचना रावत को अपने पाले में लाकर उतारा और और स्थानीय कार्यकर्ताओं के शुरुआती विरोध के बाद भी चुनाव जीता। शिवराज कहते हैं कि पिछले लोकसभा चुनाव में यहां बीजेपी लम्बे अंतर से पीछे थी मगर उस अंतर को पाट कर छह हज़ार वोटों से जीतना आसान नहीं था। वो कहते हैं कि ये आदिवासी इलाकों में बीजेपी सरकार की नीतियों और योजनाओं की जीत है। मगर इसमें शिवराज के लगातार दौरों की बात भी की जाएगी। उन्होंने चुनाव शुरू होने से पहले इन इलाकों में ध्यान दिया, लगातार दौरे किए और विधानसभा के गावों में रात रुक कर जनता का भरोसा भी जीता।

पड़ता, लेकिन अगर बीजेपी को जीत मिली है, तो शिवराज सिंह चौहान पार्टी की भीतरी राजनीति में और मजबूत हुए हैं।

गौरतलब है कि राज्य के मालवा-निमाड़ अंचल में आदिवासी वोटर काफी निर्णायक माने जाते हैं। खंडवा लोकसभा सीट आठ

Scanned with CamScanner

कमलनाथ क्यों रहे निशाने पर?

मध्यप्रदेश में वर्ष 2018 में हुए विधानसभा के चुनाव में बीजेपी ने अपनी पंद्रह साल पुरानी सरकार गंवा दी थी। बीजेपी की सरकार में वापसी ज्योतिरादित्य सिंधिया और उनके समर्थक विधायकों के पार्टी में शामिल होने के कारण संभव हो पाई थी। भाजपा को विधानसभा के आम चुनाव में 109 सीटों पर सफलता मिली थी। जबकि, साधारण बहुमत के लिए 116 सीटों की जरूरत होती है। कांग्रेस पार्टी को 115 सीट ही मिली थीं। साधारण बहुमत के लिए उसे बहुजन समाजवादी पार्टी और निर्दलीयों का समर्थन लेना पड़ा था। कांग्रेस पार्टी का नेतृत्व कमलनाथ ने किया और वे केवल पंद्रह माह ही सरकार को चला सके। भारतीय जनता पार्टी और मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान ने इस चुनाव में अपनी सरकार के कामकाज से ज्यादा कांग्रेस पार्टी के भीतर चल रही उठापटक को मुद्दा बनाया। उपचुनाव के प्रचार में भाजपा के नेता लगातार यह संदेश वोटर के बीच देने की कोशिश करते रहे कि कांग्रेस पार्टी अब समाप्ति की ओर है। उसके पास नेतृत्व की कमी है। भाजपा की इस रणनीति के पीछे बड़ी वजह उसके भीतर ही कार्यकर्ताओं में उभर रहे असंतोष को दबाना रहा। भारतीय जनता पार्टी काडर बेस पार्टी है, लेकिन पिछले कुछ सालों से वह अपने जनाधार को बढ़ाने के लिए दूसरे दलों के नेताओं को स्थान देने से भी परहेज नहीं कर रही है।

मध्यप्रदेश कांग्रेस पार्टी के कुल 25 विधायक भाजपा में जा चुके हैं, पार्टी की अंदरूनी उठापटक के बीच कई पदाधिकारियों ने इस्तीफे दिए। यह कवायद चार टुकड़ों में हुई। सबसे पहले सिंधिया समर्थक छह मंत्रियों व 19 विधायकों समेत कांग्रेस के कुल 22 विधायक भाजपा में शामिल हुए थे। फिर प्रद्युम्न सिंह पटेल, सुमित्रा कास्डेकर और नारायण पटेल ने भी भाजपा का दामन थाम लिया। फिर जब एक-एक करके तीन विधायक और पार्टी से टूटे। सब जानते हैं कि पार्टी छोड़ने वाले विधायक पैसे और पद के लालच में भाजपा में गए। बावजूद इसके कमलनाथ ने पार्टी को एक सूत्र में बांधने की कोशिशों को विराम नहीं दिया। बीजेपी के ऐड़ी चोटी को जोर लगाने के बाद भी वर्तमान कांग्रेस मजबूत स्थिति में है।

हालांकि जब कोई पार्टी हारती है तो उसमें बहुत गुण-दोष दिखने लगते हैं। आज जो लोग कमलनाथ पर उंगुलियां उठा रहे हैं, एक वक्त जब सरकार थी तो वही कमलनाथ के सामने दासों की तरह झुके रहते थे। यह बात सही है कि विपरीत परिस्थितियों में विरोधी स्वर मुखर हो जाते हैं, लेकिन जब परिस्थितियां प्रदेश में कांग्रेस के अनुकूल थीं और कमलनाथ मुख्यमंत्री थे, तब भी अनेक मौकों पर उनके नेतृत्व पर सवाल उठे थे। पार्टी से विधायकों का जाना तो अब शुरू हुआ है, लेकिन पार्टी से जुड़े अन्य लोगों का मोहभंग कांग्रेसी सरकार के गठन के साथ ही शुरू हो गया था। इसलिए मध्यप्रदेश में कांग्रेसी नेतृत्वकर्ता के तौर पर कमलनाथ का आंकलन करना हो तो शुरुआत अप्रैल 2018 से करनी होगी जब वे प्रदेशाध्यक्ष बने थे। तब कमलनाथ को केंद्रीय कांग्रेसी संगठन में चाणक्य माना जाता था। इसलिए उनकी नियुक्ति ने तब मध्यप्रदेश ही नहीं, समूचे देश में सुर्खियां बटोरी। उनकी नियुक्ति का फैसला आसान नहीं था। सिंधिया से उन्हें कड़ी प्रतिस्पर्धा मिली। कमलनाथ की नियुक्ति का आधार उनकी वरिष्ठता के सहारे राज्य में अनेक गुटों में विभाजित कांग्रेस की गुटबाजी खत्म करना था।

विधानसभा क्षेत्रों को जोड़कर बनी है। एक तरह से देखा जाए तो राय के कुल 11

विधानसभा क्षेत्रों के वोटरों का मुड परिणामों में दिखाई दिया। कांग्रेस पार्टी की रणनीति

मालवा-निमाड़ अंचल में आदिवासी वोटों के भरोसे दिखाई दी। क्षेत्र में भाजपा की पकड़

Scanned with CamScanner

आदिवासी वोटबैंक है निर्णायक भूमिका में

इस चुनाव में सबसे बड़ा फायदा आदिवासी वोट बैंक के रूप में बीजेपी को मिला। आदिवासी वोट की अहमियत का अहसास 2018 के विधानसभा चुनाव में कर चुकी बीजेपी के लिए उपचुनाव में भी चुनौती बनी हुई थीं। इस चुनाव में आदिवासियों के लिए आरक्षित 47 सीटों में से भाजपा केवल 16 सीटें जीत सकी और कांग्रेस ने दोगुनी यानी 30 सीटें जीत ली। एक सीट निर्दलीय के खाते में गई, जबकि 2013 में बीजेपी को 31 व कांग्रेस को 16 सीटें (01 निर्दलीय) को मिली थी। यानी बीजेपी को 14 सीटों को नुकसान हुआ था। यदि बीजेपी आदिवासी वोटर को साधे रखती तो शिवराज सरकार 2018 में फिर बन जाती। क्योंकि बीजेपी बहुमत से महज 07 वोट से दूर रह गई थी। बता दें कि मध्यप्रदेश में वैसे तो आदिवासियों की आबादी 22 प्रतिशत है और ये विधानसभा की 95 सीटों पर निर्णायक भूमिका में रहते हैं। बता दे कि मध्यप्रदेश में वैसे तो आदिवासियों की आबादी 22 प्रतिशत है और ये विधानसभा की 95 सीटों पर निर्णायक भूमिका में रहते हैं।

कमजोर है। यह संदेश इस बात से चला गया कि उसने कांग्रेस की पूर्व मंत्री रही सुलोचना रावत को उम्मीदवार बनाया। मालवा-निमाड़ अंचल में भारतीय जनता पार्टी को विधानसभा के आम चुनाव में आशाजनक सफलता नहीं मिली थी। जोबट में भाजपा को बाहरी पर भरोसा करना पड़ा। खंडवा में कांग्रेस के पूर्व अध्यक्ष अरुण यादव के बयान को भाजपा ने खूब प्रचारित किया। इस मुद्दे ने काम किया। यह इस बात से भी स्पष्ट हो जाता है कि पार्टी के बड़वाह विधायक सचिन बिरला चुनाव के बीच में ही भाजपा में शामिल हो गए। आने वाले दिनों में एक और उपचुनाव की जमीन भाजपा ने तैयार कर ली

मालवा-निमाड़ अंचल में भारतीय जनता पार्टी को विधानसभा के आम चुनाव में आशाजनक सफलता नहीं मिली थी। जोबट में भाजपा को बाहरी पर भरोसा करना पड़ा। खंडवा में कांग्रेस के पूर्व अध्यक्ष अरुण यादव के बयान को भाजपा ने खूब प्रचारित किया। इस मुद्दे ने काम किया। यह इस बात से भी स्पष्ट हो जाता है कि पार्टी के बड़वाह विधायक सचिन बिरला चुनाव के बीच में ही भाजपा में शामिल हो गए। आने वाले दिनों में एक और उपचुनाव की जमीन भाजपा ने तैयार कर ली है। यह उपचुनाव भी गैर भाजपाई के लिए होगा।

Scanned with CamScanner

मध्यप्रदेश विधानसभा से इन उपचुनावों के नतीजों से कुछ फर्क नहीं पड़ने वाला था बावजूद इसके दोनों प्रमुख पार्टियों ने दमखम के साथ चुनाव लड़ा।

है। यह उपचुनाव भी गैर भाजपाई के लिए होगा।

आमतौर पर विधानसभा अथवा लोकसभा के उपचुनाव के नतीजे उस राजनीतिक दल के पक्ष में रहते हैं जिसकी सरकार राज्य में होती है। बीजेपी ने वोटरों के बीच यह संदेश भी दिया कि यदि विपक्षी दल का विधायक चुना जाता है तो नुकसान क्षेत्र का ही होगा। चुनाव में बड़े-बड़े वादे और दावे भी भाजपा की ओर से किए गए। पार्टी के राष्ट्रीय महासचिव कैलाश विजयवर्गीय ने अपनी चुनावी सभा में इस बात को स्पष्ट रेखांकित किया कि नतीजों से राज्य की भाजपा सरकार नहीं गिरना है और ना ही कांग्रेस सरकार बना सकती है। विजयवर्गीय ने चेताते हुए कहा था कि ऐसे में वोटर किसी कारण से भाजपा के खिलाफ वोट देता है तो

बीजेपी की ताकत बनी कांग्रेस की कमजोरी

उपचुनाव में कांग्रेस और बीजेपी के बीच सीधा मुकाबला रहा। इस मुकाबले में कांग्रेस न महंगाई को मुद्दा बना सकी और न ही बीजेपी के मूल कार्यकर्ता की नाराजगी को भुना पाई। उपचुनाव में कांग्रेस की कमजोरी ही बीजेपी की ताकत भी बनी। बीजेपी ने उम्मीदवारों की घोषणा से पहले ही जोबट में सुलोचना रावत को लाकर कांग्रेस को बड़ा झटका दिया, लेकिन पार्टी ने इसे गंभीरता से नहीं लिया। इसके बाद मतदान के 06 दिन पहले बड़वाह विधायक सचिन बिरला को लाकर बीजेपी ने ताकत बताई। बिरला पिछले साल दिसंबर से पार्टी से नाराज चल रहे थे, लेकिन इसे गंभीरता से नहीं लिया गया। मुख्यमंत्री सहित पूरी सरकार और पार्टी का संगठन इन चुनावों को एक युद्ध की तरह लड़ रहा था। प्रदेश के उपचुनाव बीजेपी के लिए लाभदायक साबित हुए।

Scanned with CamScanner

बिहार, बंगाल, राजस्थान, हिमाचल, मध्यप्रदेश समेत 13 राज्यों में किसने मारी बाजी और किसे लगा झटका?

13 राज्यों की 29 विधानसभा सीटों व 03 लोकसभा चुनाव सीटों पर हुए उपचुनाव के सभी नतीजे आ गए हैं। इन नतीजों को आगामी पांच राज्यों की विधानसभा चुनावों पर पड़ने वाले प्रभाव को लेकर भी देखा जा रहा है। लोकसभा सीट केंद्र के लिहाज से तो वहीं विधानसभा सीट राज्यों के हिसाब महत्वपूर्ण थी। इस उपचुनाव के परिणाम से पता चल रहा है कि अबकी बार मंहगाई, पेट्रोल व गैस की कीमतों का आसमान छूना अहम मुद्दा बनकर उभरा। खैर इस चुनाव में नतीजें एक तरफा नहीं आए। हालांकि हिमाचल प्रदेश मे बीजेपी को बुरी तरह से हार का मुंह देखना पड़ा। आपको बता दें कि तीन लोकसभा सीट पर हुए उपचुनाव में तीन लोकसभा सीटों मे 02 सीटें भाजपा के पास थी। हिमाचल की मंडी और मध्यप्रदेश की खंडवा लोकसभा सीट तथा दादर नगर हवेली की सीट निर्दलीय उम्मीदवार के पास थी। जो नतीजे सामने आए उसमें बीजेपी दो में से एक सीट ही बचाने में कामयाब हुई है। पार्टी को हिमाचल के चुनाव में तगड़ा झटका लगा है यहां पार्टी अपनी सीट नहीं बचा पाई। सबसे बड़ी बात तो यह थी कि बीजेपी जिस मंडी सीट को गंवाई हैं, यह सीएम जयराम ठाकुर का गृहनगर होने के कारण महत्वपूर्ण थी और प्रतिष्ठा भी दांव पर लगी थी।

बीजेपी और उसके सहयोगी दलों ने 29 विधानसभा सीटों के लिए हाल में हुए उपचुनावों में 14 सीटों पर जीत दर्ज की जबकि कांग्रेस ने 8 सीटें जीतीं। इस उपचुनाव के परिणाम हिमाचल प्रदेश और तेलंगाना को छोड़कर ज्यादातर राज्यों में सत्तारूढ़ दलों के पक्ष में रहे। हिमाचल प्रदेश में सत्तारूढ़ भाजपा को बड़ा झटका देते हुए विपक्षी दल कांग्रेस ने तीनों विधानसभा सीटों फतेहपुर, अर्की और जुबल-कोटखाई और प्रतिष्ठित मंडी लोकसभा सीट पर जीत हासिल की। पश्चिम बंगाल की मुख्यमंत्री ममता बनर्जी की तृणमूल कांग्रेस को राज्य में हुए उपचुनावों में मतदाताओं का जोरदार समर्थन मिला। उसने राज्य की सभी 04 विधानसभा सीटों पर जीत हासिल की, जिसमें वे 02 सीटें भी शामिल हैं जो उसने भाजपा से छीनी है। तृणमूल कांग्रेस को 75.02 प्रतिशत वोट मिले। देश के 13 राज्यों में हुए उपचुनावों के परिणाम भाजपा के साथ-साथ कांग्रेस के लिए भी

असर विकास कार्यों पर पड़ेगा। वैसे राय में भाजपा की सरकार होने के बाद भी दमोह का

वोटर उपचुनाव में कांग्रेस के विधायक को चुनकर विधानसभा में भेज चुका है। दमोह में

पार्टी के मूल कार्यकर्ता की उपेक्षा हार की बड़ी वजह बनी थी। खंडवा लोकसभा सीट

Scanned with CamScanner

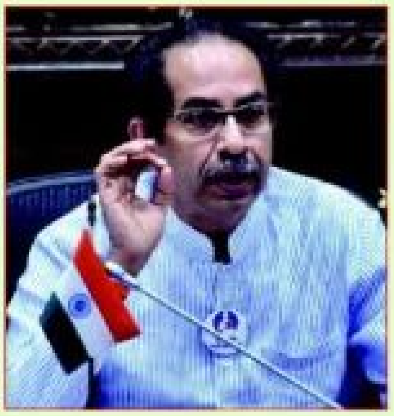
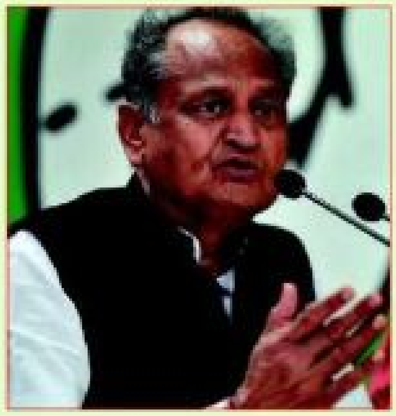
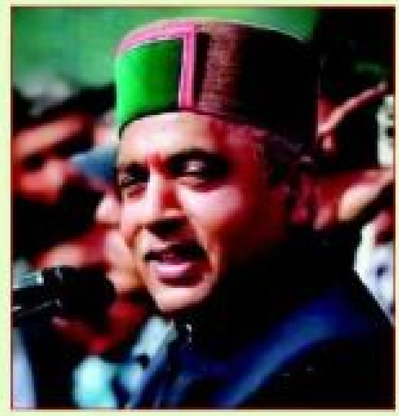

मिले-जुले रहे। कांग्रेस ने राजस्थान, हिमाचल प्रदेश और कर्नाटक में बढ़त हासिल की और भाजपा से सीटें छीनीं, लेकिन उसे असम, मध्यप्रदेश और मेघालय में नुकसान हुआ। भाजपा को 07 विधानसभा सीटों पर जीत मिली, जबकि उसके सहयोगी जद (यू) ने दो (बिहार में), यूनाइटेड पीपुल्स पार्टी लिबरल- दो (असम में), एमएनएफ- एक (मिजोरम में) और एनपीपी- दो (मेघालय में) सीटें जीतीं। एनपीपी की सहयोगी यूडीपी को भी एक सीट मिली। कांग्रेस ने आठ सीटें, टीएमसी ने चार, वाईएसआरसी ने एक और इनेलो ने एक सीट जीती। लोकसभा की एक-एक सीट कांग्रेस, शिवसेना और भाजपा ने जीती।

13 राज्य 29 सीटें पर क्या रहे नतीजे?- देश में 13 राज्यों की 29 विधानसभा सीटों पर उपचुनाव हुए थे। इसमें असम की 05, पश्चिम बंगाल की 4, मध्यप्रदेश, हिमाचल प्रदेश और मेघालय की 03-03, बिहार, कर्नाटक और राजस्थान की 02-02 और आंध्र प्रदेश, हरियाणा, महाराष्ट्र, मिजोरम व तेलंगाना की 1-1 विधानसभा सीट शामिल थीं। 29 सीटों पर हुए विधानसभा उपचुनाव में सबसे ज्यादा चर्चा बंगाल, मध्यप्रदेश और बिहार की रही, यहां पर सभी की निगाहें टिकी थी। 29 सीटों पर आए नतीजों के बाद अगर देखा जाए तो बीजेपी को बंगाल और राजस्थान सीटों में से अधिकांश सीटों पर निराशा ही हाथ लगी। गौरतलब है कि बीजेपी दूसरे पायदान पर भी नहीं आ सकी।

बिहार में नहीं चली लालू का जादू- बिहार की जिन दो सीटों पर उपचुनाव हो रहा था, उस सीट पर पहले से ही सत्ताधारी पार्टी का कब्जा था। कुशेश्वस्थान और तारापुर सीटें अबकी बार और महत्वपूर्ण मानी जा रही थी। क्योंकि लालू प्रसाद यादव खुद चुनावी कमान संभाल रखी थी। लालू ने अपने उम्मीदवारों के पक्ष में जबरदस्त चुनाव प्रचार किए और कयास लगाए जा रहे थे कि इसका फायदा आरजेडी को मिल सकता है लेकिन लालू का जादू कामयाब नहीं हुआ और फिर से दोनों सीटें सत्ताधारी जेडीयू के खाते में चली गईं।

बंगाल में टीएमसी ने किया क्लीन स्वीप- आपको बता दें कि बंगाल में जबसे विधानसभा के नतीजे आए हैं उसके बाद बीजेपी के लिए वहां कोई अच्छी खबर नहीं आयी। बीजेपी उपचुनाव में वह दोनों सीटें भी हार गई जो पिछले चुनाव में जीती थीं।

पर कब्जा बरकरार रखने के साथ ही बीजेपी ने जोबट और पृथ्वीपुर सीट कांग्रेस से छीनकर ताकत का अहसास करा दिया है। इस चुनाव में सबसे बड़ा फायदा आदिवासी वोट बैंक के रूप में बीजेपी को मिला। इस चुनाव में कांग्रेस ने दमोह मॉडल पर चुनाव

Scanned with CamScanner

लड़ा, लेकिन वह फेल दिखाई दिया। कांग्रेस 31 साल से बीजेपी के कब्जे वाली रैगांव सीट कब्जा करने में सफल रही।

उपचुनावों की जीत बढ़ाएगी दिग्गजों के सियासी कद

प्रदेश में तीन विधानसभा और एक लोकसभा सीट के उपचुनाव में भाजपा के प्रबंधन ने सबको हैरत में डालकर तीन सीटों पर परचम फहराया है। इसमें भाजपा ने कांग्रेस की परंपरागत मानी जाने वाली दोनों जोबट व पृथ्वीपुर सीट को छीन लिया। यह दोनों ही सीटें अभी कांग्रेस के पास थी, लेकिन अब भाजपा ने कांग्रेस के गढ़ को भेद दिया। इसके अलावा खंडवा लोकसभा पर भी कब्जा बरकरार रखा है। इस बीच रैगांव सीट जरूर भाजपा के हाथ से फिसल गई, लेकिन कांग्रेस की दो परंपरागत सीटों को छीनने की रणनीति ने भाजपा में अनेक नेताओं के सियासी कद बढ़ा दिए हैं। अब आगे की राजनीति में इन नेताओं को इस सियासी कामयाबी के हिसाब से तवज्जो बढ़ेगी।

तीनों सीट की जीत में सबसे अधिक फायदा सीएम शिवराज सिंह चौहान, प्रदेश अध्यक्ष वीडी शर्मा और चुनाव प्रबंधन समिति संयोजक मंत्री भूपेंद्र सिंह का है। तीनों का कद इस जीत के बाद बढ़ेगा। तीनों सीट पर सबसे अधिक जोर सीएम शिवराज सिंह चौहान ने लगाया था। शिवराज के चेहरे के बल पर यह सीटें आई हैं। शिवराज ने जहां मैदान संभाला, तो भोपाल में रहकर सियासी प्रबंधन को भूपेंद्र सिंह ने संभाल रखा था।

पृथ्वीपुर विधानसभा : गोपाल भार्गव, विश्वास सारंग और भूपेंद्र सिंह- इस सीट पर मंत्री अरविंद भदौरिया एवं भारत सिंह कुशवाह को जिम्मा दिया गया था। लेकिन परिस्थितियों को भांपकर भाजपा ने बाद में अनौपचारिक रूप से इनकी बजाए मंत्रियों गोपाल भार्गव, विश्वास सारंग और भूपेंद्र

प्रदेश में तीन विधानसभा और एक लोकसभा सीट के उपचुनाव में भाजपा के प्रबंधन ने सबको हैरत में डालकर तीन सीटों पर परचम फहराया है। इसमें भाजपा ने कांग्रेस की परंपरागत मानी जाने वाली दोनों जोबट व पृथ्वीपुर सीट को छीन लिया। यह दोनों ही सीटें अभी कांग्रेस के पास थी, लेकिन अब भाजपा ने कांग्रेस के गढ़ को भेद दिया। इसके अलावा खंडवा लोकसभा पर भी कब्जा बरकरार रखा है। इस बीच रैगांव सीट जरूर भाजपा के हाथ से फिसल गई, लेकिन कांग्रेस की दो परंपरागत सीटों को छीनने की रणनीति ने भाजपा में अनेक नेताओं के सियासी कद बढ़ा दिए हैं।

Scanned with CamScanner

सिंह को और इस सीट पर लगाया गया। इस सीट पर गोपाल और भूपेंद्र की मेहनत कमाल किया। इस जीत के बाद गोपाल और भूपेंद्र को खासतौर पर सियासी फायदा यादा होगा। शिशुपाल को भाजपा में लाने के बाद से ही भूपेंद्र का सपोर्ट भी रहा है, इस कारण वे इस सीट पर मानीटरिंग भी कर रहे थे।

जोबट विधानसभा : राजवर्धन और गोविंद राजपूत- इस सीट पर भाजपा ने मंत्री विश्वास सारंग और प्रेम सिंह पटेल को जिम्मेदारी दी थी, लेकिन पृथ्वीपुर की तरह ही परिस्थितियों को भांपकर बाद में मंत्री गोविंद सिंह राजपूत और राजवर्धन सिंह दत्तीगांव को उतारा गया था। यहां गोविंद राजपूत पर केस भी दर्ज हो गया था। यहां सुलोचना रावत को कांग्रेस से लाकर भाजपा प्रत्याशी बनाने में राजवर्धन ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इसलिए उन्हें जीत का ज्यादा फायदा मिलेगा। जोबट में आदिवासी वोट को भाजपा की ओर झुकाना बड़ा फायदा रहा।

रैगांव विधानसभा : ब्रजेंद्र प्रताप सिंह- यहां भाजपा ने मंत्री रामखिलावन पटेल और बिसाहूलाल साहू को जिम्मा दिया था, लेकिन बाद में मंत्री बजेंद्र प्रताप सिंह सिंह को उतारा था। यह सीट भाजपा हार गई है, लेकिन सूत्रों के मुताबिक इस हार के लिए सांसद गणेश सिंह की खामियों को संगठन में जिम्मेदार माना जा रहा है।

खंडवा लोकसभा- इस सीट पर भाजपा की ओर से करीब एक दर्जन मंत्री लगे थे, इस कारण यहां की जीत का सबसे अधिक श्रेय सीएम शिवराज सिंह चौहान की मेहनत और संगठन के प्रबंधन को जाता है। इस सीट पर विधानसभावार कमल पटेल, तुलसी सिलावट, इंदर सिंह परमार, विजय शाह, मोहन यादव, उषा ठाकुर, जगदीश देवड़ा आदि को लगाया गया था।

कांग्रेस में कमलनाथ का जिम्मा ज्यादा- दूसरी ओर कांग्रेस में मुख्य रूप से प्रदेश कांग्रेस अध्यक्ष कमलनाथ की रणनीति खंडवा लोकसभा, पृथ्वीपुर और जोबट विधानसभा पर रही। रैगांव पर कमलनाथ की रणनीति सफल रही।

अरुण यादव- खंडवा लोकसभा सीट पर कांग्रेस के सबसे बडे दिग्गज नेता पूर्व केंद्रीय मंत्री अरुण यादव हैं। खंडवा की हार अरुण यादव के कद में भी कमी लाएगी, लेकिन अरुण खुद चुनाव से पीछे हट गए थे। इस कारण यह हार सीधी उनकी हार नहीं गिनी जाएगी।

अजय सिंह- रैगांव सीट पर कांग्रेस को जीत मिली है, जिसके चलते कांग्रेस के क्षेत्रीय दिग्गज पूर्व नेता प्रतिपक्ष अजय सिंह को कुछ फायदा जरुर होगा। अजय सिंह ने इस सीट पर कांग्रेस के लिए ताकत लगाई थी। हालांकि यह जीत अजय के सियासी कद में ज्यादा इजाफा नहीं कर पाएगी।

Scanned with CamScanner

हसदेव अरण्य क्षेत्र में कोयला खदान खोले जाने का मामला

आदिवासी कर रहे आंदोलन, जंगल और ज़मीन बचाने के लिए लामबंदी

विजया पाठक

छत्तीसगढ़ में जल, जंगल और जमीन बचाने की लड़ाई में आदिवासी लामबंद हो गए हैं। यह लामबंदी इसलिए हो रही है क्योंकि प्रदेश की भूपेश बघेल सरकार प्रकृति और आदिवासियों की अनदेखी कर उद्योगपतियों को एक-एक कर कोयला खदानों का आवंटन करती जा रही है। जिसके कारण प्रदेश के आदिवासी वर्ग का अस्तित्व खतरे में पड़ गया है। उनके सामने रोजी-रोटी का संकट मंडराने का खतरा पैदा हो गया है।

बीते कई दिनों से राज्य के सरगुजा, सूरजपुर और कोरबा ज़िले के बीस से ज्यादा गांवों के आदिवासी हसदेव अरण्य क्षेत्र में कोयला खदान खोले जाने के ख़िलाफ़ धरना दे रहे हैं। उनका आरोप है कि कोल ब्लॉक के लिए पेसा कानून और

Scanned with CamScanner

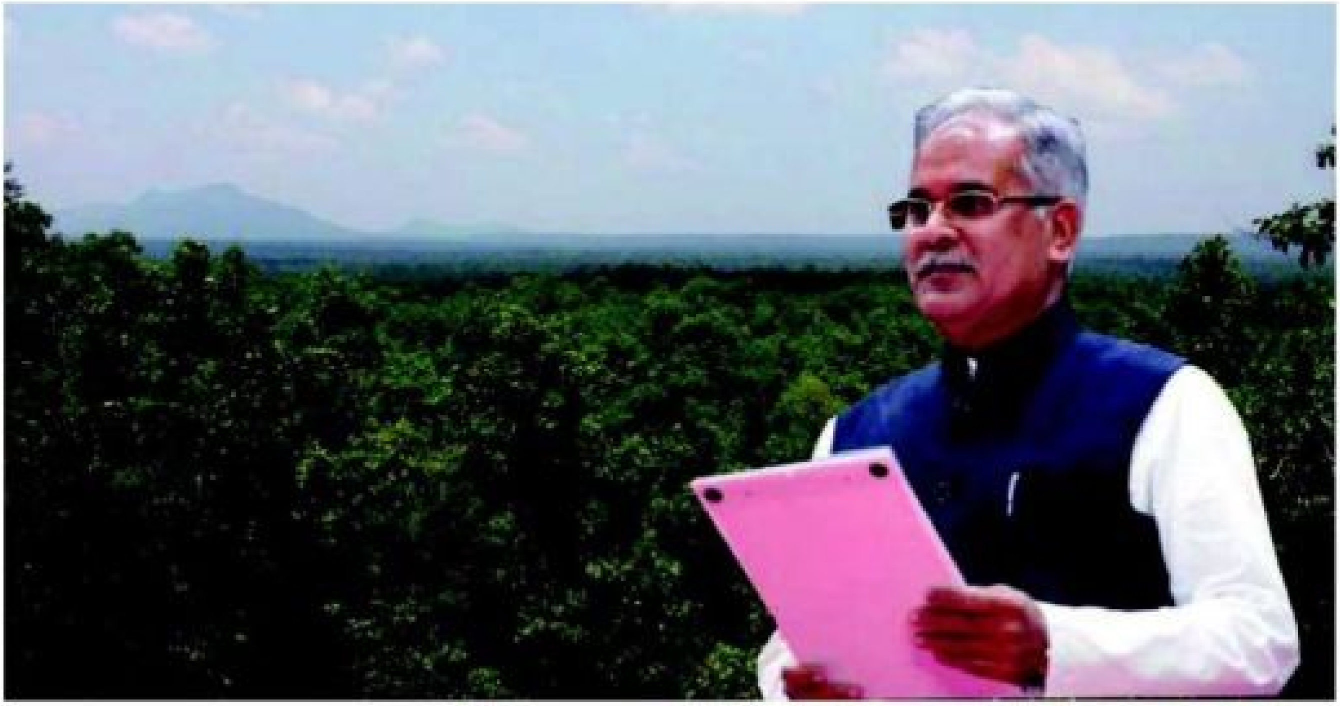

पांचवी अनुसूची के प्रावधानों की अनदेखी की गई है। साथ ही प्रदेश की भूपेश बघेल सरकार आदिवासियों के हितों पर कुठाराघात कर रही है। यह पहला मौका नहीं है जब प्रदेश की सरकार ने आदिवासियों के हकों पर हो रहे अत्याचार पर आवाज नहीं उठाई है। इससे पहले भी सरकार ने जल, जंगल और जमीन के मामलों में उद्योगपतियों का ही पक्ष लिया है।

आपको बता दें कि छत्तीसगढ़ के उत्तरी भाग में करीब एक लाख सत्तर हजार हेक्टेयर में फैले हसदेव अरण्य के वन क्षेत्र में जंगलों पर उजड़ने का खतरा मंडरा रहा है। इन क्षेत्रों में रहने वाले आदिवासियों ने जंगलों को बचाने के लिए मोर्चा संभाल लिया है। दरअसल इस पूरे वनक्षेत्र में कोयले का अकूत भंडार छुपा हुआ है और यही इन जंगलों पर छाए संकट का कारण भी है। पूरे इलाके में कुल 20 कोल ब्लॉक चिन्हित हैं, जिसमें से 06 ब्लॉक में खदानों के खोले जाने की प्रक्रिया जारी है। एक खदान परसा ईस्ट केते बासेन शुरू हो चुकी है और इसके विस्तार के लिए केते एक्सटेंशन के नाम से नई खदान खोलने की तैयारी है। वहीं परसा, पतुरिया, गिधमुड़ी, मदनपुर साउथ में भी खदानों को खोलने की कवायद जारी है। इन परियोजनाओं में करीब एक हजार आठ सौ बासठ हेक्टेयर निजी और शासकीय भूमि सहित सात हजार सात सौ तीस हेक्टेयर वनभूमि का भी

इनका कहना है-

कानूनों का खुला उल्लंघन हो रहा है

इन खनन परियोजनाओं की स्वीकृति की प्रयिाओं में पेसा कानून 1996, वन अधिकार मान्यता कानून 2006, भूमि अधिग्रहण कानून 2013 और तमाम कानूनों और संवैधानिक प्रावधानों की धज्जियां उड़ाते हुए कोल बेयरिंग एक्ट 1957 और कोयला खदान विशेष प्रावधान अधिनियम दिसंबर 2014 का उपयोग किया जा रहा है। साथ ही लगातार खनन परियोजनाओं की स्वीकृति प्रयिाओं को आगे बढ़ाया जा रहा है। प्रस्तावित 06 परियोजनाओं में चोटिया कोल ब्लॉक नीलामी में बाल्को कंपनी को मिली है, अन्य 05 कोल ब्लॉक विभिन्न राज्य सरकारों को आवंटित हुई हैं, जिनके एमडीओ (माइन डेवलपर कम ऑपरेटर) अनुबंध अदानी कंपनी (और उसकी सहायक इकाइयों) को दिए गए हैं। वर्तमान में संचालित परसा ईस्ट केते बासेन का संचालन भी अदानी इंटरप्राइजेज लिमिटेड के द्वारा ही किया जा रहा है। कॉरपोरेट घराने को पिछले दरवाजे से लाभ पहुंचाने के लिए एमडीओ का तरीका बनाया गया है और समृद्ध जैव विविधता से परिपूर्ण हसदेव अरण्य के जंगलों में कोयला खदानों की अनुमति दी जा रही है।

▸▸ आलोक शुक्ला, संयोजक, हसदेव अरण्य बचाओ संघर्ष समिति

Scanned with CamScanner

अधिग्रहण होना है। खदानों की स्वीकृति प्रक्रियाओं से ग्रामीण हैरान हैं और इसके विरोध में खुलकर सामने आ गए हैं। प्रभावित क्षेत्र के सैकड़ों आदिवासी व अन्य ग्रामीण लामबंद होते हुए विगत कई दिनों से अनिश्चितकालीन धरने पर बैठे हुए हैं। बावजूद इसके राज्य सरकार इनकी सुध नहीं ले रही है।

गौरतलब है कि यूपीए सरकार के कार्यकाल के दौरान पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय के तत्कालीन मंत्री जयराम रमेश द्वारा साल 2009 में हसदेव अरण्य क्षेत्र को नो गो क्षेत्र घोषित किया गया था। हालांकि साल 2011 में परसा ईस्ट केते बासेन और तारा कोल

इनका कहना है-

बात विकास की नहीं, बल्कि नीयत की है

आज देश का 21 प्रतिशत कोयला छत्तीसगढ़ से जा रहा है। अगर वन समृद्ध वन संपदा, हसदेव बांगो बांध, असंख्य जीव जंतुओं, छत्तीसगढ़ के पर्यावरण और बीस से भी अधिक गांवों को उजड़ने से बचाने के लिए कुछ लाख टन कोयला नहीं निकाला जाएगा तो क्या देश का विकास रुक जाएगा? असल बात विकास की नहीं, बल्कि नीयत की है। कॉरपोरेट के मुनाफे के सामने सरकारों को विनाश दिखना बंद हो गया है।

▸▸ उमेश्वर सिंह आर्मो, निवासी मदनपुर

हम प्रकृति को उजड़ने नहीं देंगे

करमी पेड़ की हम लोग पूजा करते हैं। करमा त्योहार में गांव के लोग करमी पेड़ की डाली को एक निश्चित स्थान में गाड़कर उसके इर्द गिर्द करमा लोकनृत्य करते हैं। जिंवटी मछली भी हमारी संस्कृति में पूजनीय है। जिंवतिया त्योहार में हम महिलाएं व्रत रखकर इस मछली की पूजा करती हैं और बाद में उसे वापस नदी में छोड़ देती हैं। जन्म से लेकर मृत्यु तक के हमारे संस्कार प्रकृति से जुड़े हैं। नदियां, पहाड़, पेड़-पौधे इनसे ही हमारी जिंदगी जुड़ी है, हम इन्हें उजड़ने नहीं देंगे।

Scanned with CamScanner

खदानें खुलने से वन्य जीवों का अस्तित्व खतरे में

पूरा इलाका सघन वनों से भरपूर है। यही क्षेत्र हसदेव बांगो (मिनीमाता बांगो बांध) का कैचमेंट एरिया है। खदानों के खुलने से हसदेव व चोरनई नदियों का अस्तित्व संकट में आ जाएगा, जिससे बांध पर भी सूखे का संकट आ जाएगा, जबकि इसी बांध के पानी से ही करीब चार लाख तिरेपन हजार हेक्टेयर खेती की जमीन सिंचित होती है। साथ ही इस इलाके के जंगल हाथी, भालू, हिरण और अन्य दुर्लभ वन्य जीवों के प्राकृतिक निवास हैं। खदानों से इनके अस्तित्व पर भी संकट आ जाएगा। बता दें कि इस पूरे क्षेत्र में हाथियों का लगातार आवागमन होता रहता है और आए दिन हाथी मानव द्वंद की घटनाएं होती रहती हैं। वन क्षेत्र कम होने से यह समस्या और भी विकराल रूप धारण कर सकती है। परसा कोल ब्लॉक के प्रभावित ग्राम घाटबर्रा में जनवरी 2018 में तीन महिलाओं तथा जनवरी 2019 मे परसा गांव में एक बुजुर्ग और ईंट भट्ठे में काम करने वाली नवविवाहित युवती की हाथियों के हमलों में जान जा चुकी है। आदिवासियों के आंदोलन के दौरान ही आठ हाथियों का दल क्षेत्र में विचरण कर रहा था, जिसकी चेतावनी वन विभाग के द्वारा साल्ही, हरिहरपुर, फतेहपुर और घाटबर्रा के ग्रामीणों को सतर्क रहने के लिए जारी की गई थी। गांवों के कोटवारों द्वारा भी मुनादी की गई थी। पर हैदराबाद की कंपनी विमटा लैब लिमिटेड द्वारा परसा कोल ब्लॉक की पर्यावरणीय स्वीकृति के लिए तैयार किए गए ईआईए (पर्यावरणीय प्रभाव आंकलन) रिपोर्ट में इस क्षेत्र में साल 2013 के बाद हाथियों का आवागमन नहीं होना दर्शाया गया है। कोल ब्लॉक के कोर जोन में पाए जाने वाले कई तरह के सरीसृप, चिड़ियों की कई प्रजातियां, स्तनधारी वन्य जीव जंतु, प्राकृतिक जल स्रोत, छोटे नाले और उनमें रहने वाली मछलियां और अन्य जलीय जीव तथा संस्कृति से जुड़े महत्वपूर्ण प्रजाति के पेड़ पौधों का जि तक नहीं है। यहां तक कि करमी पेड़ और जिंवटी मछली तक ईआईए रिपोर्ट से नदारद है, जबकि पूरे सरगुजा संभाग के ग्रामीण अंचल में मनाए जाने वाले करमा त्योहार का नाम ही करमी पेड़ से पड़ा है।

ब्लॉक में खनन की अनुमति यह कहते हुए दी कि ये बाहरी भाग में हैं और इनमें खनन परियोजनाओं से जैव विविधता को ज्यादा असर नहीं पड़ेगा, पर इसके बाद किसी भी अन्य परियोजना को अनुमति नहीं दी जा सकती। इसके बाद भी फिर से इस क्षेत्र में नई परियोजनाएं शुरू की जा रही हैं। प्रस्तावित परियोजनाएं सरगुजा, सूरजपुर और कोरबा जिले के अंतर्गत हैं। तीनों ही जिले पांचवीं अनुसूचित क्षेत्र हैं, जहां पेसा कानून 1996 का प्रावधान है। इन क्षेत्रों में ग्रामसभा का निर्णय ही सर्वोपरि होता है। पूरे क्षेत्र की 20 ग्राम सभाओं ने अक्टूबर 2014 में कोल परियोजनाओं के विरोध में प्रस्ताव पारित किया था। इस परियोजना के लिए फर्जी ग्रामसभा के माध्यम से अनुमति की प्रक्रिया की गई है जबकि इसकी लिखित शिकायत कलेक्टर सरगुजा से की गई है पर

Scanned with CamScanner

इनका कहना है–

खदान खुलने से हम लोग बेघर हो जाएंगे

खदान खुलने से हजारों आदिवासियों समेत अन्य परिवारों को विस्थापित होकर बेघर होना पड़ेगा, जिससे गांव के बिखरने के साथ ही प्राचीन आदिवासी संस्कृति भी विलुप्त हो जाएगी। आदिवासियों ने जल, जंगल और जमीन की रक्षा का संकल्प लेते हुए प्रत्येक गांव की तरफ से ग्राम रक्षा के प्रतीक विभिन्न देवी देवताओं के नाम से दिए जलाए और पारंपरिक करमा नृत्य किया है।

▸▸ मंगल सिंह आर्मो, स्थानीय निवासी

जंगल कट जाएंगे तो हम सब कहां जाएंगे?

इन्हीं वनों से हम आदिवासियों को पुटु–खुखड़ी (प्राकृतिक जंगली मशरूम), तेंदूपत्ता, सालबीज, चिरौंजी, महुआ तथा जरूरत की अन्य चीजें प्राप्त होती हैं, जिस पर हमारी परंपरागत आजीविका निर्भर है। इलाके के जंगलों में दुर्लभ प्रजाति की औषधीय वनस्पतियां प्राकृतिक रूप से पाई जाती हैं, जिससे हम सब स्थानीय निवासी अपना उपचार करते हैं। जंगलों पर ही हम सब निर्भर हैं, जंगल कट जाएंगे तो हम सब कहां जाएंगे, हम अपनी जमीन और जंगल उजड़ने नहीं देंगे।

▸▸ शिवकुमारी, निवासी, चारपारा

अदानी कंपनी के लोग बना रहे दबाव

खदान का विरोध करने वालों को प्रताड़ित किया जा रहा है। तरह–तरह के हथकंडे अपनाकर हमें अपने गांव और जमीन से बेदखल करने का षड़यंत्र किया जा रहा है। खदानों का विरोध करने वालों को कई तरह से प्रताड़ित किया जाता है। मैंने भी इस परियोजना की पर्यावरणीय स्वीकृति के लिए ग्राम बासेन में आयोजित जनसुनवाई के दौरान खदान खोलने का विरोध किया था। अदानी कंपनी के लोग बार–बार मुझे खदान का विरोध न करने और ग्रामसभा में सहमति का प्रस्ताव पारित करवाने का दबाव बनाते रहे, पर मैंने मना कर दिया। तब कंपनी के इशारे पर मेरे ऊपर जमीन का फर्जी पट्टा बनवाने का आरोप लगाते हुए कूटरचित आवेदन के आधार पर उदयपुर थाने में एफआईआर दर्ज करवाया गया। उस मामले में मुझे और मेरी पत्नी को 45 दिनों तक जेल में रहना पड़ा।

▸▸ बालसाय कोर्राम, निवासी, हरिहरपुर,
जनपद पंचायत उदयपुर के सदस्य

इस मामले में कार्रवाई तो दूर जांच तक नहीं की गई है। वन अधिकार मान्यता कानून 2006 के तहत आदिवासियों के साथ हुए ऐतिहासिक अन्याय को दूर करने की मंशा रही है। इस कानून की धारा 4 (5) और पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय के आदेश (30 जुलाई 2009) के अनुसार जब तक वन संसाधनों पर व्यक्तिगत और सामुदायिक दावों के मान्यता की प्रक्रिया समाप्त नहीं हो जाती और संबंधित ग्रामसभा की लिखित सहमति नहीं मिल जाती है, तब तक किसी भी परियोजना के लिए वन भूमि का डायवर्जन नहीं हो सकता है।

Scanned with CamScanner

राज्यपाल अनुसुईया उइके ने उन्हें भरोसा दिया कि इसके कानूनी पहलुओं का अध्ययन कर नियमानुसार आवश्यक कार्रवाई की जाएगी।

सरकारों के रुख को देखते हुए ग्रामीणों ने भी संघर्ष का मूड बना लिया है। हसदेव अरण्य बचाओ संघर्ष समिति के बैनर तले धरना की शुरुआत 14 अक्टूबर को बिलासपुर-अम्बिकापुर नेशनल हाईवे में स्थित सूरजपुर जिला के तारा ग्राम में ग्राम पंचायत के सरपंच की अनापत्ति के बाद धरनास्थल का चयन किया गया था। 19 अक्टूबर को सरपंच के द्वारा एसडीएम की अनुमति नहीं होने का हवाला देते हुए प्रदर्शनकारियों को धरनास्थल बदलने का नोटिस थमा दिया गया। प्रदर्शनकारियों ने तारा में ही दूसरे स्थान पर शांतिपूर्ण धरना शुरू कर दिया। 21 अक्टूबर से धरनास्थल को पुन: बदलते हुए सरगुजा जिला के परसा कोल ब्लॉक के प्रभावित गांव फतेहपुर में लगातार धरना किया जा रहा है। बार-बार धरनास्थल बदलने के बाद भी आंदोलनकारियों की संख्या कम होने के बजाय बढ़ती ही जा रही है। वर्तमान में इस आंदोलन में सरगुजा, सूरजपुर और कोरबा जिले के साल्ही, फतेहपुर, हरिहरपुर, घाटबर्रा, सैदू, सुसकम, परोगिया, तारा, मदनपुर, मोरगा, पुटा, गिधमुड़ी, पतुरियाडांड़,खिरटी, जामपानी, करैहापारा, धजाक, बोटोपाल, उचलेंगा, ठिर्री आमा, केतमा, अरसियां गांवों के सैकड़ों आदिवासी व अन्य ग्रामीण सैकड़ों की संख्या में प्रतिदिन शामिल हो रहे हैं।

आंदोलनकारियों ने हसदेव अरण्य बचाओ संघर्ष समिति के माध्यम से प्रदेश के मुख्यमंत्री भूपेश बघेल को पत्र लिखकर गैरकानूनी तरीकों और फर्जी ग्राम सभा प्रस्तावों से हो रही खदानों की अनुमति निरस्त करने की मांग की है। पिछले दिनों अपनी मांगों को लेकर बस्तर से पैदल यात्रा कर रायपुर पहुंचे आदिवासियों के लिए राजभवन के दरवाजे खोल दिए गए। राज्यपाल अनुसुइया उइके ने राजभवन के लॉन में चौपाल लगाई और करीब 300 आदिवासियों को बिठाकर उनकी समस्या सुनी। राज्यपाल ने आदिवासी क्षेत्रों में स्थित इलाकों की इस समस्या के लिए राज्य सरकारों को जिम्मेदार ठहराया। राज्यपाल ने उन्हें भरोसा दिया कि इसके कानूनी पहलुओं का अध्ययन कर नियमानुसार आवश्यक कार्रवाई की जाएगी।

Scanned with CamScanner

प्रियंका गांधी का अब तक का सबसे बड़ा राजनीतिक दांव

यूपी में महिलाओं को मिलेंगी 40 फीसदी सीटें

आनन्द मोहन श्रीवास्तव

यूपी में महिलाओं को 40 फीसदी सीटें देने की घोषणा करके प्रियंका गांधी ने एक तरह से यह साफ कर दिया है कि कांग्रेस सीटों की एक बड़ी संख्या पर चुनाव लड़ेगी। यानी अन्य पार्टियों के साथ कोई समझौता या गठबंधन नहीं करेगी। महिला सशक्तिकरण दांव को इतने प्रचार-प्रसार के साथ खेलने का तभी कोई तुक बनता है, जब आप चुनावी संग्राम में अपनी उपस्थिति को उल्लेखनीय ढंग से बढ़ाएं। आगामी उत्तरप्रदेश विधानसभा चुनाव में कांग्रेस पार्टी द्वारा 40 प्रतिशत सीटों पर महिला उम्मीदवार उतारने के प्रियंका गांधी के फैसले ने काफी हलचल मचाई है। बिहार में भी नीतीश कुमार ने सचेत रणनीति के तहत महिला मतदाताओं को कल्याणकारी योजनाओं की एक लंबी फेहरिस्त से लुभाया। राज्य में शराबबंदी का उनका फैसला प्राथमिक तौर पर महिला वोटरों को लक्षित था। यहां तक कि उन्होंने महिला उम्मीदवारों को 35 प्रतिशत टिकट भी दिए। महिला उम्मीदवारों को पश्चिम बंगाल चुनावों में कहीं ज्यादा सफलता मिली।

Scanned with CamScanner

महिलाओं के लिए 40 फीसदी सीटों की घोषणा करके प्रियंका गांधी ने एक तरह से यह साफ कर दिया है कि कांग्रेस पार्टी सीटों की एक बड़ी संख्या पर चुनाव लड़ेगी। यानी अन्य विपक्षी पार्टियों के साथ पार्टी कोई समझौता या गठबंधन नहीं करेगी। महिला सशक्तिकरण दांव को इतने प्रचार–प्रसार के साथ खेलने का तभी कोई तुक बनता है, जब वह चुनावी संग्राम में अपनी उपस्थिति को उल्लेखनीय ढंग से बढ़ाएं। साथ ही यह इस बात का भी ऐलान है कि अब प्रियंका आगे बढ़कर नेतृत्व करने को लेकर प्रतिबद्ध हैं.

यह कहना दोहराव हो सकता है कि महिला उम्मीदवार उन राज्यों में बेहतर करती हैं जहां उनका सामान्य सशक्तिकरण और उनकी साक्षरता दर ज्यादा है। इस संदर्भ में हिंदी पट्टी का अध्ययन करना काफी जानकारी देने वाला हो सकता है, जहां के सामाजिक और राजनीतिक जीवन में पितृसत्ता और बहुसंख्यकवाद का कॉकटेल एक काफी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यहां यह भी ध्यान दिलाया जाना चाहिए कि हिंदी पट्टी के बड़े हिस्से में में कुल श्रम बल में महिलाओं की भागीदारी काफी निराशाजनक है। इकाई के आंकड़े में, है। कल्पना कीजिए बिहार और यूपी जैसे राज्यों में रोजगार मे शामिल हो सकने वाली 100 महिलाओं में सिर्फ 5 से 8 ही नौकरी के बारे में सोचती हैं। दक्षिणी और पूर्वी राज्यों में यह अनुपात काफी यादा है। इसका सीधा असर उनकी आजादी, सशक्तिकरण और नतीजे के तौर पर उनके वोटिंग प्रारूप पर पड़ता है। महिलाओं ने हाल के वर्षों में ही स्वतंत्र तरीके से मतदान करना शुरू किया है। एक दशक पहले करीब 15 फीसदी महिलाएं ही अपने परिवार के पुरुष सदस्यों से प्रभावित हुए बगैर स्वतंत्र तरीके से मतदान करती थीं। अब 50 प्रतिशत से कुछ ज्यादा महिलाएं स्वतंत्र तरीके से वोट डालती हैं और एक अन्य सच्चाई है कि दक्षिणी-पूर्वी राज्यों और हिंदी पट्टी के राज्यों के बीच इस आंकड़े में भी काफी अंतर होगा। महिलाओं के वोटिंग रुझान काफी जटिल हैं और इन्हें समझना आसान नहीं है। जो बात निश्चित तौर पर कही जा सकती है, वह यह है कि महिलाएं पहले की तुलना में कहीं ज्यादा बड़ी संख्या में मतदान कर रही हैं। यहां तक कि संख्या के हिसाब से मतदान में वे पुरुषों को पीछे छोड़ दे रही हैं। तो सवाल है कि अगले साल की शुरुआत में होने वाले यूपी विधानसभा चुनाव में प्रियंका क्या कमाल दिखा पाएंगी?

पहली बात, महिलाओं के लिए 40 फीसदी सीटों की घोषणा करके प्रियंका गांधी ने एक तरह से यह साफ कर दिया है कि कांग्रेस पार्टी सीटों की एक बड़ी संख्या पर चुनाव लड़ेगी। यानी अन्य विपक्षी पार्टियों के साथ पार्टी कोई समझौता या गठबंधन नहीं करेगी। महिला सशक्तिकरण दांव को इतने प्रचार-प्रसार के साथ खेलने का तभी कोई तुक बनता है, जब वह चुनावी संग्राम में अपनी उपस्थिति को उल्लेखनीय ढंग से बढ़ाएं। साथ ही यह इस बात का भी ऐलान है

Scanned with CamScanner

प्रियंका गांधी के महिला सशक्तिकरण के दांव में इन समीकरणों में एक अलग आयाम जोड़ने की क्षमता है, लेकिन इसके लिए उन्हें कांग्रेस के संगठन में, यह जैसा भी है, जोश भरना होगा। कांग्रेस ने निश्चित ही उत्तरप्रदेश के चुनावी समर में एक नया विमर्श खड़ा किया है। 2017 के विधानसभा चुनाव में 40 फीसदी वोट हासिल करने वाली भाजपा निश्चित ही एक बढ़त के साथ शुरुआत कर रही है, क्योंकि यह 8 से 10 फीसदी मतों को गंवाने की स्थिति में भी बिखरे विपक्ष की मेहरबानी से टक्कर में रहेगी।

कि अब प्रियंका आगे बढ़कर नेतृत्व करने को लेकर प्रतिबद्ध हैं, जबकि 2017 में उनकी भूमिका पर्दे के पीछे तालमेल बैठाने तक सीमित थी, जब कांग्रेस ने समाजवादी पार्टी के साथ गठबंधन में चुनाव लड़ा था। ऐसा लगता है कि इस बार कांग्रेस ने अकेले चुनाव लड़ने का मन बना लिया है। उम्मीद है अखिलेश यादव भी इसी राह पर चलेंगे, जिनका 2017 में कांग्रेस या बसपा के साथ गठबंधन का अनुभव अच्छा नहीं रहा है। असली सवाल यह है कि क्या कांग्रेस ने महिला मतदाताओं को अपने पाले में लाने की कोई ठोस रणनीति तैयार की है? या फिर यह बस एक बड़ा विचार है, जिस पर विचार किया जाना अभी बाकी है? आने वाले महीनों में इस अभियान से कितना राजनीतिक फायदा होगा, यह कह पाना अभी मुश्किल है।

एक बात जो कांग्रेस के पक्ष में है, वह यह है कि राज्य में भाजपा एक जबरदस्त सरकार विरोधी भावना से जूझ रही है। इसके अलावा 35 सालों से ज्यादा समय में राज्य में किसी भी सत्ताधारी दल को दूसरा कार्यकाल नहीं मिला है। पहले ही कई स्तरों समीकरण बदल रहे हैं। लखीमपुर खीरी की घटना के बाद किसानों के गुस्से के पश्चिमी उत्तरप्रदेश से दूसरे हिस्सों में फैलने, भाजपा के भीतर गैर-यादव ओबीसी नेताओं के खम ठोकने और सवर्ण जातियों के एक हिस्से की नाराजगी ने निश्चित ही भाजपा की चिंताएं बढ़ा दी हैं।

प्रियंका गांधी के महिला सशक्तिकरण के दांव में इन समीकरणों में एक अलग आयाम जोड़ने की क्षमता है, लेकिन इसके लिए उन्हें कांग्रेस के संगठन में, यह जैसा भी है, जोश भरना होगा। कांग्रेस ने निश्चित ही उत्तरप्रदेश के चुनावी समर में एक नया विमर्श खड़ा किया है। 2017 के विधानसभा चुनाव में 40 फीसदी वोट हासिल करने वाली भाजपा निश्चित ही एक बढ़त के साथ शुरुआत कर रही है, क्योंकि यह 8 से 10 फीसदी मतों को गंवाने की स्थिति में भी बिखरे विपक्ष की मेहरबानी से टक्कर में रहेगी। प्रियंका गांधी द्वारा दिया गया लड़की हूं, लड़ सकती हूं, का नारा अगर जादू करने में नाकाम रहता है, तो यह विपक्ष के मतों को और विभाजित कर सकता है। 2017 में कांग्रेस को महज 07 फीसदी मत मिले थे। इस स्तर से यह अपने अपने मत प्रतिशत में कितनी बढ़ोतरी कर सकती है और यह भाजपा के मुख्य प्रतिद्वंद्वी समाजवादी पार्टी को कितना नुकसान पहुंचाएगी, यह उत्तर प्रदेश चुनावों की सरगर्मियां बढ़ने के बाद मुख्य सवाल होगा। साफ है यह प्रियंका गांधी द्वारा खेला गया अब तक का सबसे बड़ा राजनीतिक जुआ है।

Scanned with CamScanner

सियासी मुद्दा क्यों नहीं बनती हैं पहाड़ों की आपदाएं?

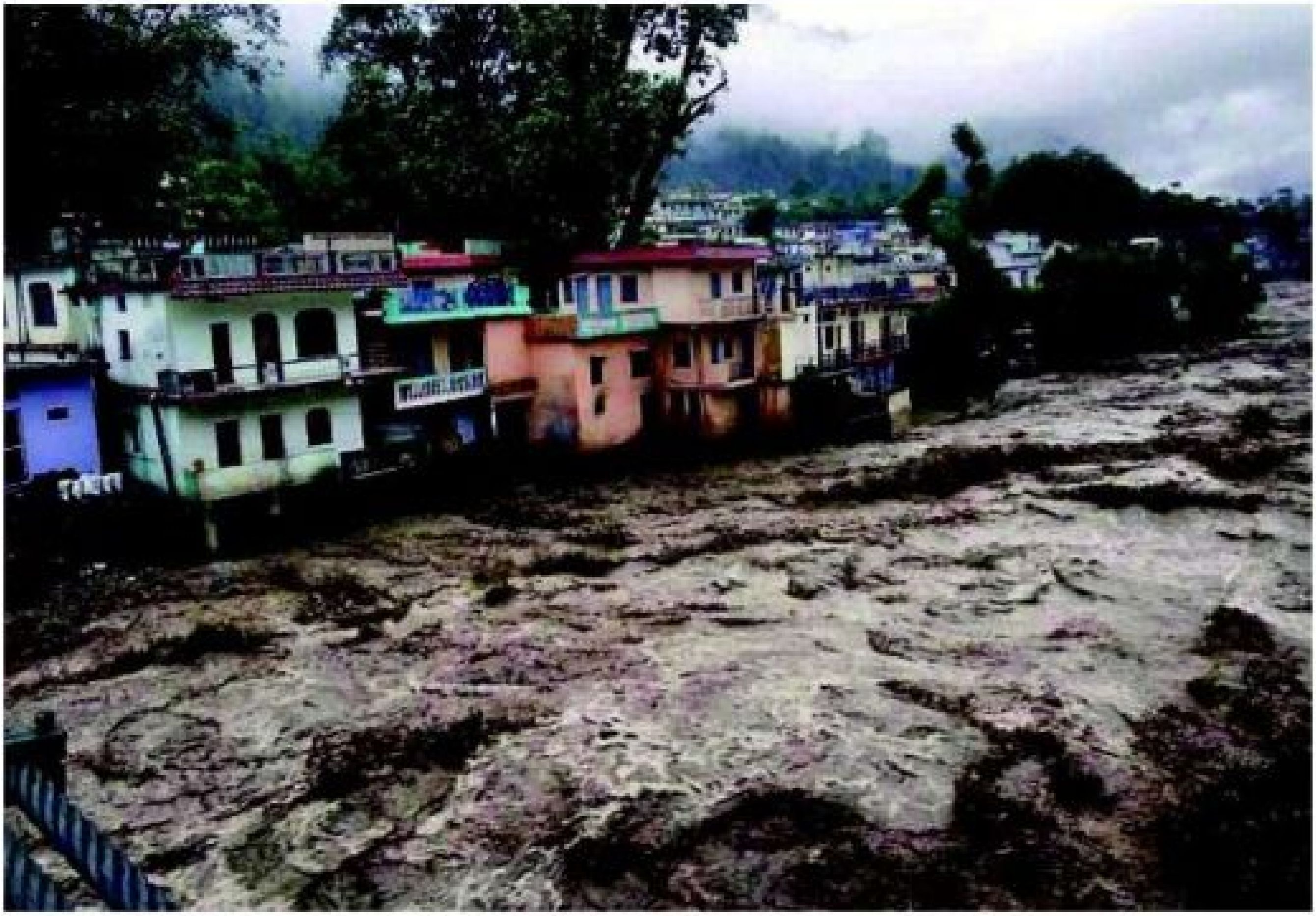

शैफाली दुबे

पहाड़ों में जनता की दुख-तकलीफ़ों को दूर करने के सियासी एजेंडा में पर्यावरण और विकास के सवाल हमेशा से ही विरोधाभासी रहे हैं क्योंकि राजनीतिक दलों को लगता है कि पर्यावरण बचाने की बातें करेंगे तो विकास के लिए तरसते लोग वोट नहीं देंगे। उत्तराखंड की 70 विधानसभा सीटों के लिए चुनाव सिर पर हैं। दो दशक पूर्व राज्य बनने के बाद अब चार महीने बाद यहां के मतदाता पांचवीं बार नई सरकार के लिए वोट डालेंगे, लेकिन जब भी राजनीतिक पार्टियां चुनाव में वोट मांगने जाती हैं तब न तो कोई पर्यावरण की बात करता है और न ही पहाड़ों में हर साल होने वाली आपदाओं से बचाव के लिए कोई चिंता उनकी बातों, भाषणों या घोषणा पत्र में झलकती है। दूसरी ओर मौसमी बदलाव, भयावह आपदाएं और पर्वतीय जनजीवन पर प्रकृति के रौद्र रूप का सबसे ज्यादा दुष्प्रभाव साल दर साल तीव्र हो रहा है। वास्तव में पहाड़ों में जनता की दुख-तकलीफों को दूर करने के सियासी एजेंडा में पर्यावरण और विकास के सवाल हमेशा से ही विरोधाभासी रहे हैं। इसलिए कि राजनीतिक दलों को लगता है कि पर्यावरण बचाने की बातें करेंगे तो विकास के लिए तरसते लोग वोट नहीं देंगे।

Scanned with CamScanner

पर्यावरण संरक्षण की बातों को उत्तराखंड की सियासी पार्टियां और उनके नेतागण विकास विरोधी अवधारणा मानकर चलते हैं। जबकि हमें पर्यावरण संरक्षण की चिंता इसलिए होनी चाहिए कि इसी पर हमारी भावी पीढ़ी का भविष्य टिका है। यदि पर्यावरण का संरक्षण नहीं होगा और ऐसी नीतियां अपनाई जाती रहेंगी जिनसे विकास नहीं बल्कि विनाश को न्योता मिलेगा तो ज़ाहिर सी बात है कि हम अपने समाज ही नहीं समूची मानवता को एक अंधेरी गली में धकेल रहे हैं। हिमालय के पर्वतीय क्षेत्रों में भूस्खलन होने की घटनाएं कोई नई बात नहीं हैं लेकिन हाल के वर्षों में बादल फटने, भूस्खलन और अचानक भारी वर्षा के कारण पर्वतीय क्षेत्रों में भारी तबाही हुई है। हाल में लौटते मानसून की भारी वर्षा के इस बुरे हश्र से कुमायूं मंडल में सबसे ज्यादा तबाही हुई है। करीब 70 से ज्यादा लोग जान से हाथ धो बैठे हैं। अकेले नैनीताल में बाढ़ व भूस्खलन ने तीन दर्जन से ज्यादा लोगों का जीवन लील लिया।

उत्तराखंड के पहाड़ों में ये आपदाएं घुम-फिरकर जून 2013 की यादों को हर वक्त ताज़ा कर देती हैं। जब केदारनाथ में तकरीबन 5,000 से ज्यादा लोग कुछ ही मिनटों में भारी बाढ़ की चपेट आने से मौत के मुंह में चले गए। इसी तरह 2021 फरवरी के शुरू में नंदा देवी ग्लेशियर के टूटने से धौली गंगा नदी में आई भारी बाढ़ ने जो तबाही मचाई उसकी विभीषिका से कुछ ही किमी दूर निर्माणाधीन तपोवन-रैणी पावर प्रोजेक्ट में 150 से ज्यादा श्रमिक और इंजीनियर मौत के मुंह में समा गए। ज्ञात रहे कि यह पूरा क्षेत्र भूकंप व भूकंपीय लिहाज से भी काफी संवेदनशील है। 1991 में उत्तरकाशी में आए भयावह भूकंप से 786 लोगों की मौत हो गई थी। उसके कुछ ही साल बाद 1998 में कैलाश मानसरोवर यात्रा मार्ग में मालपा में एक बड़े भूस्खलन ने जो तबाही मचाई, उसमें बड़ी तादाद में स्थानीय लोग तो मरे ही, मानसरोवर यात्रा पर जा रहे तीर्थयात्री और सैलानी भी अपनी जान से हाथ धो बैठे थे। मालपा हादसे से उत्तराखंड का यह पर्वतीय क्षेत्र अभी उबर ही न पाया था कि 1999 में चमोली में एक भारी भूकंप (रिक्टर पैमाने पर 6.8) ने 106 स्थानीय लोगों की जान ले ली। इस भूकंप नेना केवल मुख्य सड़कों में दरारें पैदा कर दीं बल्कि बड़े पैमाने पर लोगों के घरों, होटलों और पुलों को भी क्षतिग्रस्त किया। इन हादसों से पर्वतीय जनजीवन पर तात्कालिक और दूरगामी दोनों ही तरह का दुष्प्रभाव पड़ता है। ज़ाहिर यह है कि पर्वतीय क्षेत्र पहले से ही मानवीय पलायन का बड़ा संकट झेल रहा है। इसके असर से पहाड़ के मैदानी क्षेत्रों में आबादी का दबाव बहुत बढ़ गया है। ज़ाहिर है कि कोटद्वार, ऋषिकेश, देहरादून, नैनीताल, हल्द्वानी और उधमसिंह नगर के कई शहरों-कस्बों के लोगों ने नदी-नालों के किनारे मकान बसा दिए। पहाड़ों से आने वाले सैलाब को जब आगे बहाने का रास्ता नहीं मिलता तो बाढ़ की प्रलयकारी तेज धाराएं रास्ते में आने वाली हर चीज को बहाकर ले जाती हैं।

पूरा क्षेत्र भूकंप व भूकंपीय लिहाज से भी काफी संवेदनशील है। 1991 में उत्तरकाशी में आए भयावह भूकंप से 786 लोगों की मौत हो गई थी। उसके कुछ ही साल बाद 1998 में कैलाश मानसरोवर यात्रा मार्ग में मालपा में एक बड़े भूस्खलन ने जो तबाही मचाई, उसमें बड़ी तादाद में स्थानीय लोग तो मरे ही, मानसरोवर यात्रा पर जा रहे तीर्थयात्री और सैलानी भी अपनी जान से हाथ धो बैठे थे।

पर्वतीय जिलों में अक्टूबर 2021 को हुई ताज़ा वर्षा और जनधन की इतनी हानि के

Scanned with CamScanner

पैसा, हैसियत और बाहुबल के बूते सत्ता तक पहुंचने की जद्दोजहद में पर्यावरण संरक्षण और हिमालय को आपदाओं से बचाने जैसी गंभीर बहस में न तो राजनीतिक लोग और सरकारें पड़ना चाहती हैं और न ही नौकरशाही का इस तरह के मामलों से कोई सरोकार दिखता है। आपदाओं और प्राकृतिक हादसों की इस जद्दोजहद में साधन संपन्न और मैदानी क्षेत्रों में ज़मीन और मकान खरीदने और बनाने की हैसियत वाले लोग ही खुद को सुरक्षित करने की जुगत में सफल हो रहे हैं।

कारणों को जानने के लिए अभी वैज्ञानिक आधार तलाशने में वक्त लगेगा लेकिन सरकार की विकास नीति को लेकर कई तरह के प्रश्न हमेशा खड़े रहते हैं। ऊपरी हिमालयी क्षेत्रों में बड़े बांधों व जल विद्युत परियोजनाओं को प्राकृतिक आपदाओं का सबसे बड़ा कारण माना जाता है। पर्यावरणविद इन संवेदनशील पहाड़ों के सीने को चीर कर रन-फॉर-फीवर पैटर्न पर बांध परियोजनाओं के प्रति सरकारों को अरसे से आगाह करते आ रहे हैं।

पर्वतीय इलाकों मे 4-5 साल साल से बेमौसम की भारी वर्षा से वैज्ञानिक हैरान हैं। अब जरूरत इस बात की है कि पहाड़ों मे खेती के लिए मानसून की प्रतीक्षा जून मे नही बल्कि सितंबर-अक्टूबर तक करने का नया ट्रेंड विकसित करना होगा। चीन सीमा से सटे कुमायूं अंचल मे इस बार गढ़वाल के मुकाबले विदा होते मानसून की भारी वर्षा के घटनाम पर गंभीर शोध व विमर्श हो ताकि मौसम के नए बदलावों का सामना हो सके। विडंबना यह भी है कि प्रकृति के इस रौद्र रूप और हादसों की आशंकाओं के बीच फंसे जीवित रहने की विवशताओं ने लोगों को अपनी भावी पीढ़ी के भविष्य के प्रति गहरी चिंताओं में डुबो दिया है। मुश्किल यह भी है कि सुदूर क्षेत्र सामरिक दृष्टि और राष्ट्रीय सुरक्षा की दृष्टि से भी बेहद संवेदनशील हैं।

सबसे बड़ी चिंता यह है कि हिमालय के तात्कालिक और दीर्घकालिक संरक्षण के लिए राष्ट्रीय व उत्तराखंड में राज्य स्तर पर सरकारों की ओर से कोई गंभीर चिंताएं नहीं दिखतीं। हिमालय का यह पर्वतीय अंचल भूकंप, भूस्खलन, बादल फटने, साथ ही ऊंची चट्टानों के गिरने, नदी-नालों के प्रलयंकारी कटाव, ग्लेशियरों के पिघलने और लुप्त होने के साथ ही गर्मियों में यहां के जंगलों में भीषण आगजनी एक स्थानीय समस्या विकराल रूप ले रही है। सबसे बड़ी चिंता इन आपदाओं के कारण प्रकृति की होने वाली क्षति के साथ ही बेशकीमती जानें जा रही हैं। विशेषज्ञ बादल फटने की घटनाओं से होने वाले हादसों में एकाएक बढ़ोतरी से खासे चिंतित दिखते हैं। दरअसल, सत्ता में बने रहने के लिए वोट की राजनीति का सबसे अहम रोल हो गया है। पैसा, हैसियत और बाहुबल के बूते सत्ता तक पहुंचने की जद्दोजहद में पर्यावरण संरक्षण और हिमालय को आपदाओं से बचाने जैसी गंभीर बहस में न तो राजनीतिक लोग और सरकारें पड़ना चाहती हैं और न ही नौकरशाही का इस तरह के मामलों से कोई सरोकार दिखता है। आपदाओं और प्राकृतिक हादसों की इस जद्दोजहद में साधन संपन्न और मैदानी क्षेत्रों में ज़मीन और मकान खरीदने और बनाने की हैसियत वाले लोग ही खुद को सुरक्षित करने की जुगत में सफल हो रहे हैं। इसके उलट साधनहीन, बेबस, बेरोज़गार लोग सुदूर गांवों में जीवन बसर करने को अभिशप्त हैं।

बहरहाल इन प्राकृतिक आपदाओं पर 2-4 दिन तक बहस और खबरें कुछ टीवी चैनलों और अखबारों के पन्नों तक सीमित रहती हैं और उसके बाद वक्त बीतते ही इन सारी विभीषिकाओं को हमेशा के लिए भुला दिया जाता है।

Scanned with CamScanner

सरकारी खजाने पर बढ़ा बोझ, ममता का केंद्र सरकार की योजनाओं पर नरम रूख

अमित राय

पश्चिम बंगाल सरकार ने कई केंद्रीय योजनाओं का राय में क्रियान्वयन नहीं किया था। इसके बदले सरकार ने खुद अपनी योजनाएं शुरू कर दीं। परिणामस्वरूप राज्य के सरकारी खजाने पर बोझ बढ़ने लगा। अब जब सरकारी धन की कमी नजर आ रही है तो ममता ने केंद्रीय योजनाओं पर नरम रवैया अपनाया है। बंगाल की मुख्यमंत्री ममता बनर्जी द्वारा शुरू की गई सामाजिक योजनाओं की प्रतिबद्धता को पूरा करने के लिए धन की कमी के कारण, पश्चिम बंगाल सरकार धीरे-धीरे केंद्रीय परियोजनाओं की ओर झुक रही है, जिसका सत्तारूढ़ तृणमूल कांग्रेस ने कुछ समय पहले कड़ा विरोध किया था। हालांकि, राज्य सरकार ने अभी तक राज्य में चल रही विभिन्न योजनाओं में केंद्र की हिस्सेदारी लेने के संबंध में अंतिम नीतिगत निर्णय नहीं लिया है, शीर्ष अधिकारियों ने पहले सभी विभागों को यह देखने का निर्देश दिया है कि क्या केंद्रीय परियोजनाओं के वित्तीय लाभों का उपयोग राज्य में परियोजनाओं के विभिन्न क्षेत्रों में किया जा सकता है। जिन दो क्षेत्रों में राज्य ने केंद्रीय सहायता के लिए पहले ही मंजूरी दे दी है, वे हैं- आयुष्मान भारत, नागरिकों के लिए स्वास्थ्य योजना और किसानों के लिए फसल बीमा योजना कृषक बंधु।

क्यों बढ़ रहा है बोझ

केंद्र के आयुष्मान भारत का मुकाबला करते हुए राज्य ने अपनी स्वयं की योजना शस्त साथी प्रोकोल्पो शुरू की थी, जिसमें

Scanned with CamScanner

हिन्दू पुजारियों को मिलेगा 1000 रुपए मासिक भत्ता और मुफ्त आवास

पश्चिम बंगाल की मुख्यमंत्री ममता बनर्जी ने राज्य के 8,000 से अधिक हिन्दू पुजारियों के लिए 1,000 रुपए मासिक वित्तीय सहायता और मुफ्त आवास की घोषणा की। ममता बनर्जी पर विपक्ष अक्सर अल्पसंख्यकों के तुष्टिकरण का आरोप लगाता है। राज्य के हिंदीभाषी और आदिवासी मतदाताओं को ध्यान में रखते हुए बनर्जी ने यह भी कहा कि उनकी सरकार ने एक हिंदी अकादमी और एक दलित साहित्य अकादमी स्थापित करने का निर्णय किया है। उन्होंने यह घोषणा हिंदी दिवस के दिन की जो हिंदी को देश की आधिकारिक भाषा के तौर पर अपनाने की याद में प्रतिवर्ष इस दिन मनाया जाता है। विपक्षी दलों ने इन घोषणाओं को चुनावी हथकंडा करार दिया। ममता बनर्जी ने कहा कि हमने पहले सनातन ब्राह्मण संप्रदाय को कोलाघाट में एक अकादमी स्थापित करने के लिए भूमि प्रदान की थी। इस संप्रदाय के कई पुजारी आर्थिक रूप से कमजोर हैं। हमने उन्हें प्रतिमाह 1,000 रुपए का भत्ता प्रदान करने और राय सरकार की आवासीय योजना के तहत मुफ्त आवास प्रदान करके उनकी मदद करने का फैसला किया है।

2011 में तृणमूल कांग्रेस को सत्ता में आने के बाद तब आलोचना का सामना करना पड़ा था जब उसने इमामों के लिए मासिक भत्ते की घोषणा की थीं। राज्य सरकार ने तब कहा था कि यह पश्चिम बंगाल के वक्फ बोर्ड द्वारा प्रदान किया जाएगा। उन्होंने राज्य के आदिवासी मतदाताओं तक भी पहुंच बनाने का प्रयास किया जिसमें से एक बड़े वर्ग ने 2019 के लोकसभा चुनाव में जंगलमहल क्षेत्र में भाजपा के पक्ष में मतदान किया था। इसमें झाड़ग्राम, पश्चिम मेदिनीपुर, बांकुरा और पुरुलिया जिले आते हैं। विपक्षी भाजपा और माकपा ने राज्य सरकार के हिंदू पुजारियों को भत्ते और एक हिंदी अकादमी के गठन के निर्णय की आलोचना की।

राज्य के सभी नागरिकों को 05 लाख रुपये का वार्षिक स्वास्थ्य कवरेज दिया गया था। एक अनुमान के मुताबिक इस योजना के सफल क्रियान्वयन के लिए राज्य को सालाना लगभग 2,000 करोड़ रुपये खर्च करने होंगे। एक साल पहले भी यह अनुमान लगभग 925 करोड़ रुपये था, लेकिन जब बनर्जी ने चुनाव से पहले घोषणा की कि राज्य के सभी नागरिकों को शस्त साथी के तहत कवर किया जाएगा, तो बजट बढ़ गया था। कई अन्य परियोजनाएं हैं जिनमें भारी लागत शामिल है और राज्य के वित्त में गंभीर सेंध लगा रही है।

हाल ही में घोषित की गई यह योजना

हाल ही में घोषित लखमीर भंडार परियोजना में अधिकारियों के अनुसार, जहां राज्य एससी, एसटी, ओबीसी समुदायों की महिलाओं को 1,000 रुपये और सामान्य जाति की महिलाओं को 500 रुपये देगा, सरकार ने इसके लिए 12,900 करोड़ रुपये का बजट आवंटित किया है। लगभग 1.8 करोड़ महिलाएं ऐसी हैं जिन्होंने अब तक इस योजना के लिए अपना पंजीकरण कराया है। इसके अलावा, राज्य ने कन्याश्री परियोजना पर 8,277 करोड़ रुपये से अधिक खर्च किए हैं, जहां अब तक 2,39,66,510 लड़कियों को उनकी शिक्षा के लिए वित्तीय सहायता दी गई है। इस योजना का उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि लड़कियां स्कूल में रहें और कम से कम 18 वर्ष की आयु तक उनकी शादी ना की जाए।

योजना को दो चरणों में बांटा गया है। पहला 750 रुपये का वार्षिक प्रोत्साहन है जो 13 से 18 वर्ष की आयु वर्ग की लड़कियों को भुगतान किया जाना है। वित्त विभाग ने कहा कि इसके अलावा कई अन्य सामाजिक योजनाएं हैं जैसे- सबुजश्री, जोल धोरो जोल भोरो, मुफ्त राशन प्रणाली, दुआरे सरकार जो राज्य के खजाने पर भी भारी दबाव डाल रही है। पिछले साल तालाबंदी और महामारी के कारण राजस्व बहुत कम है और इस साल भी राय की अर्थव्यवस्था में सुधार के संकेत कम दिख रहे हैं। इस स्थिति में राज्य के लिए अपने विकास कार्यों को जारी रखना और साथ ही साथ योजनाओं को जारी रखना मुश्किल हो रहा है।

अब केंद्र की मदद लेने को नरम हो रही टीएमसी

हालांकि, ममता बनर्जी ने अभी तक राज्य में केंद्रीय योजनाओं को अनुमति देने के लिए कोई नीतिगत निर्णय नहीं लिया है, ऐसे संकेत हैं कि राज्य सरकार राज्य द्वारा संचालित योजनाओं में केंद्रीय अनुदान का उपयोग करने के प्रति नरम हो रही है। राज्य पहले से ही स्वास्थ्य बुनियादी ढांचे के क्षेत्र में केंद्रीय परियोजना में बड़ी हिस्सेदारी ले रहा है। अन्य मामलों में विभिन्न विभागों के अधिकारी संभावनाओं की जांच कर रहे हैं।

Scanned with CamScanner

नीतीश कुमार और लालू प्रसाद यादव की जुगलबंदी को समझने की जरूरत

क्या नीतीश कुमार को अपने 15 सालों पर भरोसा नहीं है?

समीर शास्त्री

नीतीश कुमार अकेले मुख्यमंत्री नहीं हैं जिन्होंने 15 साल लगातार शासन किया। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी तीन बार मुख्यमंत्री चुने जा चुके थे और लगभग 13 साल पूरे कर चुके थे। दिल्ली में शीला दीक्षित ने 15 साल पूरे किए, उसके बाद चुनाव हारीं। ओडिशा में नवीन पटनायक भी उनसे लंबे समय से सरकार चला रहे हैं। पंद्रह साल का समय कम नहीं होता। इतने समय में एक पूरी पीढ़ी होश संभालती है। बिहार के जो युवा वोटर हैं- यानी 20-25 साल तक के- उनकी स्मृति में नीतीश से पहले की राजनीति नहीं है। इस पीढ़ी के सामने आज का बिहार है और बाकी दुनिया या देश के दूसरे हिस्से भी हैं। बहुत संभव है कि उन्हें अपना बिहार आज मायूस करता हो। उन्हें लगता हो कि महाराष्ट्र, गुजरात, पंजाब और कर्नाटक जैसे राज्यों के मुकाबले उनका राय काफ़ी पिछड़ा है। खासकर इस कोरोनाकाल में, जब उन्होंने लाखों बिहारी नागरिकों को दूसरे प्रदेशों से पैदल बदहाल, लौटते और सड़क पर मरते देखा तो उन्हें महसूस हुआ कि बिहार में सड़कें तो बनीं, लेकिन वे लोगों को बस बाहर ले जाने के लिए बनीं, बिहार के भीतर किन्हीं कारखानों, कार्यस्थलों तक ले जाने के लिए नहीं। लेकिन नीतीश राजनीति का चक्का इतना पीछे ले जाना चाहते हैं तो बिहार का मौजूदा विकास ही इसकी इकलौती वजह नहीं है। इसकी कुछ और वजहें भी बहुत स्पष्ट हैं। पहली यह कि अगर पंद्रह साल

बिहार की राजनीति में अगर इस बार इतने सारे गठबंधन दिख रहे हैं तो बस इसलिए नहीं कि इसके पीछे बीजेपी का खेल है, बल्कि इसलिए भी कि बिहार में निचली और पिछड़ी जातियों की राजनीतिक आकांक्षाएं भी बड़ी और मुखर हो रही हैं। निश्चय ही बिहार को इस राजनीतिक जातिवाद से पार पाना होगा। उसे विकास के झूठे एजेंडे पर चलने की जगह सामाजिक न्याय की वास्तविक चुनौतियों का वहन करना होगा। दुर्भाग्य से ख़ुद को सुशासन बाबू बताने वाले नीतीश कुमार भी यह काम नहीं कर रहे हैं।

Scanned with CamScanner

सवाल है, बिहार का क्या होगा? इस सवाल का जवाब आसान नहीं है लेकिन यह सच है कि बिहार की नई पीढ़ी के भीतर अगर नया नेतृत्व पाने की बेचैनी है तो वह पुराने चेहरों को नमस्कार करना चाहेगी। अगर नहीं है तो बिहार को राजनीति को अभी कुछ और भटकना होगा। नीतीश का हमारे पंद्रह साल बनाम पिछले पंद्रह साल दरअसल बिहार को भटकाने का एक और नया खेल भर है। जमीनी हकीकत ये भी है कि नीतीश को लालू से कोई खतरा नहीं है बल्कि उनके बेटे व प्रतिपक्ष के नेता तेजस्वी यादव ही उनके लिए सबसे बड़े खतरे के रुप में उभर रहे हैं।

पुराना विमर्श चला तो लोग भूल जाएंगे कि अपने पंद्रह वर्षों के दौरान नीतीश ने क्या-क्या किया। मसलन इस बात की चर्चा पीछे छूट जाएगी कि नीतीश अपनी राजनीतिक सुविधा से किस तरह कलाबाज़ी खाते रहे हैं। ज्यादा दिन नहीं हुए, जब प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के साथ अपनी तस्वीर छाप भर दिए जाने से वे ऐसे नाराज़ हुए कि बाढ़ग्रस्त बिहार को गुजरात से मिली मदद वापस करने की घोषणा कर दी। जाहिर है, तब उन्हें सांप्रदायिकता से लड़ना था और सिर्फ पांच साल पहले लालू यादव से हाथ मिलाकर चुनाव लड़ने में उन्हें गुरेज़ नहीं हुआ। साफ है कि 2015 में लालू यादव के साथ गठजोड़ की मदद नहीं होती तो बीजेपी उन्हें उसी वक़्त ठिकाने लगा चुकी होती लेकिन पहले लालू यादव के साथ जुड़कर उन्होंने अपनी कुर्सी बचाई और फिर बीजेपी से चिपक लिए।

दरअसल इसमें कुछ भी ग़लत नहीं कि नीतीश लगातार मुख्यमंत्री बने रहना चाहें। किसी भी राजनेता में यह इच्छा स्वाभाविक होती है लेकिन इसके लिए वैचारिक छल-कपट का सहारा लेना ठीक नहीं। नीतीश लगातार यह करते दिख रहे हैं। अब पंद्रह सालों का जो जंगल राज उन्हें याद आ रहा है, उसे वे उन दिनों सुविधापूर्वक भूल गए। दरअसल पंद्रह साल बनाम पंद्रह साल का जो मुद्दा बनाया जा रहा है, उसके पीछे दो मिथक काम कर रहे हैं। पहला मिथक यह है कि लालू यादव का कार्यकाल बिहार का जंगल राज था और दूसरा मिथक यह है कि नीतीश के आते बिहार बिल्कुल सुधर गया। लालू यादव के दौर में जिन प्रवृत्तियों को अलग से पहचाना गया, वे दरअसल पहले से मौजूद थीं, बस फ़र्क इतना पड़ा कि उनकी कमान बदल गई, उनका नेतृत्वकारी वर्ग बदल गया। बिहार के विश्वविद्यालय लालू यादव के आने से पहले ही अराजकता और जातिगत सड़ांध के शिकार थे। बिहार के छात्रों का पलायन अस्सी के दशक के आख़िरी वर्षों में शुरू हो गया था, जब लालू यादव मुख्यमंत्री नहीं बने थे। इसी तरह बिहार में जातिगत संरचनाओं के भीतर वर्चस्ववादी जातियों की दबंगई बेख़ौफ़ जारी थी। बल्कि लालू यादव के आने के बाद पहली बार यह वर्चस्व टूटा और इस वजह से कुछ जातिगत नरसंहारों की स्थिति भी बनी, लेकिन यह पुराना सिलसिला भी लालू यादव के कार्यकाल के बाद के दौर में ख़त्म हो चुका था। यही बात भ्रष्टाचार के बारे में कही जा सकती है। लालू यादव तो फिर भी चारा घोटाले की सज़ा काट चुके हैं, उसके पहले

Scanned with CamScanner

और बाद के घोटालों और घोटालेबाज़ों का जिक्र तो बिल्कुल ग़ायब है। लालू यादव के दौर के जिस अपहरण उद्योग की बात कही जाती है, उसका सिलसिला भी पुराना रहा है।

निस्संदेह लालू यादव की अपनी विफलताएं थीं। उनका सबसे बड़ा अपराध दरअसल यह था कि मंडल आयोग की सिफारिशें लागू होने के बाद भारतीय राजनीति और समाज की यथास्थिति बदलने का जो ऐतिहासिक अवसर उनके पास आया, उसे उन्होंने एक नए यथास्थितिवाद के निर्माण में लगा और गंवा दिया। राजनीति को एक झटके में ख़ारिज नहीं किए जा सकते। निस्संदेह उनके शुरुआती वर्ष बिहार की कई सामाजिक जड़ताओं को तोड़ने की कोशिश के साल भी थे। ध्यान रखने की बात यह है कि अगर लालू यादव मुख्यमंत्री नहीं बन पाए होते, अगर उन्होंने सामाजिक न्याय की राजनीति की बुनियाद इतनी मज़बूत न की होती तो आने वाले दिनों में न नीतीश का रास्ता बनता और न जीतनराम मांझी का। बिहार की राजनीति में अगर इस बार इतने सारे गठबंधन दिख रहे हैं तो बस इसलिए नहीं कि इसके पीछे बीजेपी का खेल है, बल्कि बिहार का विकास नहीं हुआ है लेकिन इन पंद्रह सालों में दूसरे राज्य कहां से कहां पहुंच गए? वे लड़कियों और महिलाओं के आत्मनिर्भर और शिक्षित होने का हवाला देते हैं लेकिन भूल जाते हैं कि बिहार में स्त्री शिक्षण की परंपरा पहले से मज़बूत रही है। ज्यादा पीछे जाने की ज़रूरत नहीं है, अगर 1974 के छात्र आंदोलन की स्मृति ही उनके भीतर बची हो तो वे याद कर सकते हैं कि किस तरह उसके बाद बनी छात्र संघर्ष युवा वाहिनी से निकल कर एक से एक तेजस्वी महिलाएं सामने आई थीं। वे चाहें तो

बिल्कुल निजी करिश्मे तक सीमित मानते हुए उन्होंने उसे अपनी पारिवारिक हदों तक महदूद कर अपनी ही ताकत घटाई और इस म में अपने कई विश्वसनीय सहयोगी खो बैठे। इससे ज्यादा बुरा यह हुआ कि बिहार में परिवर्तन की जो संभावना थी, वह भी क्षीण होती चली गई। निस्संदेह उन्होंने कई शुरुआतें की थीं- जिस चरवाहा विद्यालय का लगातार वहां के पढ़े-लिखे तबके मज़ाक बनाते रहे, वह शिक्षा को गरीब आदमी के दरवाज़े पहुंचाने का एक बेहतरीन सैद्धांतिक उपक्रम था, बेशक, जिसका व्यावहारिक पक्ष आधा-अधूरा और इसलिए विडंबनामूलक रह गया लेकिन लालू यादव के पंद्रह साल इसलिए भी कि बिहार में निचली और पिछड़ी जातियों की राजनीतिक आकांक्षाएं भी बड़ी और मुखर हो रही हैं।

निश्चय ही बिहार को इस राजनीतिक जातिवाद से पार पाना होगा। उसे विकास के झूठे एजेंडे पर चलने की जगह सामाजिक न्याय की वास्तविक चुनौतियों का वहन करना होगा। दुर्भाग्य से ख़ुद को सुशासन बाबू बताने वाले नीतीश कुमार भी यह काम नहीं कर रहे हैं। 2015 में जिस बिहार पैकेज को नरेंद्र मोदी किसी धागे से बंधी मिठाई की तरह लटका कर पेश कर रहे थे, उसी से बंधी और अटकी पड़ी योजनाओं को नीतीश भी आगे बढ़ा रहे हैं। ऐसा नहीं कि इस दौर में फणीश्वरनाथ रेणु के उपन्यासों की नायिकाओं को भी याद कर सकते हैं।

लेकिन राजनीति इतना याद रखने की फ़ुरसत नहीं देती। वह तात्कालिक जोड़-घटाव के सहारे चलती है। नीतीश का ताज़ा हिसाब यही बताता है कि बीजेपी की बैसाखी के बिना वे इस बार नहीं चल पाएंगे। लेकिन बीजेपी का इतिहास बताता है कि वह बैसाखी ही नहीं, लकड़ी भी लगाती है। तो नीतीश को वह हाथ से सहारा भी दे रही है और चुपके से पांव से लंघी भी मार रही है।

सवाल है, बिहार का क्या होगा? इस सवाल का जवाब आसान नहीं है लेकिन यह सच है कि बिहार की नई पीढ़ी के भीतर अगर

Scanned with CamScanner

नया नेतृत्व पाने की बेचैनी है तो वह पुराने चेहरों को नमस्कार करना चाहेगी। अगर नहीं है तो बिहार की राजनीति को अभी कुछ और भटकना होगा। नीतीश का हमारे पंद्रह साल बनाम पिछले पंद्रह साल दरअसल बिहार को भटकाने का एक और नया खेल भर है।

जमीनी हकीकत ये भी है कि नीतीश को लालू से कोई खतरा नहीं है बल्कि उनके बेटे व प्रतिपक्ष के नेता तेजस्वी यादव ही उनके लिए सबसे बड़े खतरे के रुप में उभर रहे हैं। पिछले कुछ अरसे में तेजस्वी ने जनहित के मुद्दों को लेकर जिस तरीके से नीतीश सरकार पर हमला बोला है और खासकर प्रदेश में बढ़ती बेरोजगारी को लेकर जो मुखरता दिखाई है,उससे युवा पीढ़ी के बीच उनका जनाधर बेहद तेजी से मजबूत हुआ है। ऐसा भी नहीं है कि सियासत के माहिर खिलाड़ी माने जाने वाले नीतीश को इसका अहसास ही न हो लेकिन सियासत का उसूल है कि विरोधी भले ही कितना ज्यादा ताकतवर बनता जा रहा हो, उसे किसी भी सूरत में अपनी तरफ से जाहिर नहीं होने देना है। नीतीश को एक बड़ा खतरा ये भी सता रहा है कि तेजस्वी की आरजेडी और चिराग पासवान की लोजपा मिलकर एक बड़ी ताकत बन जाएंगी, जो अगले चुनाव में उनकी शिकस्त की सबसे बड़ी वजह हो सकती हैं। हालांकि पिछले चुनाव में भी जेडीयू को बीजेपी से कम सीटें मिली थीं लेकिन उसके बावजूद बीजेपी ने गठबंधन का धर्म निभाते हुए नीतीश को ही सीएम बनाने का फैसला किया। इसके भी अपने सियासी मायने हैं क्योंकि बीजेपी अगली बार वहां अपने बूते पर ही सरकार बनाने की तैयारी में है और उसी के मुताबिक वो अपनी रणनीति को अंजाम देने में जुटी हुई है।

शायद ज्यादा लोग इस हकीकत से वाकिफ न हों कि नीतीश-लालू आज जिस तरह से आपस में जानी दुश्मन दिख रहे हैं, वे ऐसे थे नहीं और दोनों ने ही कभी एक-दूसरे को मुख्यमंत्री बनवाने के लिए जीजान एक

कर दी थी। लोग तो ये भी भूल जाते हैं कि साल 1990 में लालू यादव जब पहली बार बिहार के मुख्यमंत्री बने, तब बीजेपी के समर्थन से ही वे इस कुर्सी तक पहुंचे थे क्योंकि तब केंद्र में भी बीजेपी ने जनता दल के नेतृत्व वाले गठबंधन वाली सरकार को बाहर से अपना समर्थन देकर वीपी सिंह को देश का प्रधानमंत्री बनवाया था। हालांकि तब नीतीश कुमार जनता दल में इतने ताकतवर नेता नहीं थे लेकिन उसके बावजूद पर्दे के पीछे से खेली गई सियासत में उनका अहम रोल रहा था। उस समय जनता दल बिहार में सबसे बड़ी पार्टी बनी थी लेकिन इतनी सीटें नहीं मिल सकी थी कि वो अपने दम पर सरकार बना ले। लिहाज़ा बीजेपी को मिलीं 39 सीटों के समर्थन से ही 10 मार्च 1990 को लालू यादव पहली बार मुख्यमंत्री बने थे।

हालांकि वक्त आने पर लालू यादव ने भी उस अहसान का बदला चुकाने में देर नहीं की और उन्होंने 2015 में नीतीश की ताजपोशी कराने में कोई कसर बाकी नहीं रखी। लालू ने ही उस चुनाव में कांग्रेस को साथ लाकर महागठबंधन बनाया, जिसके दम पर ही नीतीश सीएम बने थे। ये अलग बात है कि ये गठजोड़ दो साल भी नहीं चल पाया और नीतीश व लालू के रास्ते फिर से जुदा हो गए। सियासी गलियारों में राजनीति के इन दोनों माहिर खिलाड़ियों के रिश्तों की तुलना समुद्र में आने वाले ज्वार-भाटा से की जाती है। देखते हैं कि इस बार ये बिहार की राजनीति में किस तरह का तूफान लाता है?

Scanned with CamScanner

धरती के बढ़े तापमान ने जीना किया मुश्किल

प्रमोद भार्गव

अमेरिका में चल रही गर्म हवाओं की मु य वजह प्रशांत महासागर क्षेत्र के पूर्व और पश्चिम के बीच तापमान में आया बड़ा अंतर माना जा रहा है। इस तरह की ढलान (ग्रेडिएंट) बनाने वाले पानी की गति ग्लोबल वार्मिंग के कारण बदल जाती है। अमेरिका के नेशनल ओशिनक एंड एटमॉस्फेरिक एडमिनिस्ट्रेशन ने यह दावा किया है। यदि किसी क्षेत्र में तीन दिन तक तापमान ऐतिहासिक औसत से ज्यादा हो जाता है तो लू के संकेत हैं। दिल्ली में बढ़ा तापमान यही संकेत दे रहा हैं। भारत में गर्म हवाएं खतरनाक साबित हुई हैं। 2015 में लू के कारण भारत में अनेक लोगों की मौतें हो गई थीं। लू से बचना मुश्किल होता है। हवाओं के कृत्रिम उपाय भी साथ छोड़ देते हैं। अंतरराष्ट्रीय मौसम केंद्र के मुताबिक गर्म व शुष्क क्षेत्र में वायुमंडल में उच्च्य दबाव की स्थिति में 3000 से 7600 मीटर की ऊंचाई पर ये गर्म हवाएं बनती हैं, जिन पर नियंत्रण किसी भी तकनीक से संभव नहीं हो पाता है।

पोट्सडैम जलवायु प्रभाव शोध संस्थान के वैज्ञानिक-प्राध्यापक एंडर्स लीवरमैन ने धरती के बढ़ते तापमान की वजह से भारत में बारिश पर होने वाले प्रभावों का अध्ययन किया है। एंडर्स के मुताबिक जितनी बार धरती का पारा वैश्विक तापमान के चलते एक डिग्री सेल्सियस ऊपर चढ़ेगा, उतनी ही बार भारत में मानसूनी बारिश 5 प्रतिशत अधिक होगी। मानसूनी बारिश का वास्तविक अंदाजा लगाना भी कठिन हो जाएगा। यह अध्ययन अर्थ सिस्टम

Scanned with CamScanner

डायनेमिक्स जर्नल में छपा है। भारत में आमतौर पर बारिश का सीजन जून के महीने से शुरू होता है और सितंबर के अंत तक चलता है। एंडर्स का कहना है कि इस सदी के अंत तक साल दर साल वैश्विक तापमान की वजह से तापमान बढ़ेगा। जलवायु परिवर्तन का नमूना है, जो भारत की मानसूनी बारिश के अगले चार सालों का अनुमान लगाता है। यह अनुमान वैश्विक तापमान के बढ़तेक्रम के आधार पर लगाया जाता है। पेरिस जलवायु समझौते के अनुबंध के तहत अधिकतम तापमान दो डिग्री सेल्सियस को तय मानक माना जाता है। इसी नमूने से दुनिया के अलग-अलग देशों में मानसूनी या तूफानी बारिश की गणना की जाती है। दुनिया में अनियमित एवं शक्तिशाली मौसम के खतरे बढ रहे हैं।

इस अध्ययन के अलावा संयुक्त राष्ट्र द्वारा 2020 में किए गए एक अध्ययन से भी स्पष्ट हुआ था कि जलवायु परिवर्तन और पानी का अटूट संबंध है। इस रिपोर्ट के मुताबिक दक्षिण एशिया को 2030 तक बाढ़ों की कीमत प्रत्येक वर्ष चुकानी पड़ेगी। इनसे करीब सालाना 15.6 लाख करोड़ की हानि उठानी पड़ सकती है। साफ है, वैश्विक तापमान के बढ़ते खतरे ने आम आदमी के दरवाजे पर दस्तक दे दी है। दुनिया में कहीं भी एकाएक बारिश, बाढ़, बर्फबारी, फिर सूखे का कहर यही संकेत दे रहे हैं। आंधी, तूफान और फिर यकायक वालामुखियों के फटने की हैरतअंगेज घटनाएं भी यही संकेत दे रही हैं कि अदृश्य खतरे इर्दगिर्द ही कहीं मंडरा रहे हैं।

इस अध्ययन के अलावा संयुक्त राष्ट्र द्वारा 2020 में किए गए एक अध्ययन से भी स्पष्ट हुआ था कि जलवायु परिवर्तन और पानी का अटूट संबंध है। इस रिपोर्ट के मुताबिक दक्षिण एशिया को 2030 तक बाढ़ों की कीमत प्रत्येक वर्ष चुकानी पड़ेगी। इनसे करीब सालाना 15.6 लाख करोड़ की हानि उठानी पड़ सकती है। साफ है, वैश्विक तापमान के बढ़ते खतरे ने आम आदमी के दरवाजे पर दस्तक दे दी है। दुनिया में कहीं भी एकाएक बारिश, बाढ़, बर्फबारी, फिर सूखे का कहर यही संकेत दे रहे हैं। आंधी, तूफान और फिर यकायक वालामुखियों के फटने की हैरतअंगेज घटनाएं भी यही संकेत दे रही हैं कि अदृश्य खतरे इर्दगिर्द ही कहीं मंडरा रहे हैं। समुद्र और अंटार्कटिका जैसे बर्फीले क्षेत्र भी इस बदलाव के संकट से दो-चार हो रहे हैं। दरअसल वायुमंडल में अतिरिक्त कार्बन डाइऑक्साइड महासागरों में भी अवशोषित होकर गहरे समुद्र में बैठ जाती है। यह वर्षों तक जमा रहती है। पिछली

Scanned with CamScanner

दो शताब्दियों में 525 अरब टन कचरा महासागरों में विलय हुआ है। इसके इतर मानवजन्य गतिविधियों से उत्सर्जित कार्बनडाइऑक्साइड का 50 फीसदी भाग भी समुद्र की गहराइयों में समा गया है। इस अतिरिक्त कार्बनडाइऑक्साइड के जमा होने के कारण अंटार्कटिका के चारों ओर फैले दक्षिण महासागर में इस कॉर्बन डाइऑक्साइड को सोखने की क्षमता निरंतर कम हो रही है। इस स्थिति का निर्माण खतरनाक है। ब्रिटिश अंटार्कटिक सर्वेक्षण के मुताबिक वैज्ञानिकों का कहना है कि दक्षिण महासागर में कार्बन डाइऑक्साइड से लबालब हो गया है। नतीजतन अब यह समुद्र इसे अवशोषित करने की बजाय वायुमंडल में ही उगलने लग गया है। अगर इसे जल्दी नियंत्रित नहीं किया गया तो वायुमंडल का तापमान तेजी से बढ़ेगा, जो न केवल मानव प्रजाति, बल्कि सभी प्रकार के जीव-जंतुओं के अस्तित्व के लिए खतरनाक होगा।

हिमालय पर कई वर्षों से अध्ययन कर रहे वाडिया भू-विज्ञान संस्थान की रिपोर्ट के अनुसार हिमालय के हिमखंडों में काले कार्बन की मात्रा लगातार बढ़ रही है। यह मात्रा सामान्य से ढाई गुना बढ़कर 1899 नैनोग्राम हो गई है। दरअसल काले कार्बन से तापमान में वृद्धि होती है। यह सूर्य के प्रकाश को अवशोषित करने में अत्यंत प्रभावी है। इससे हिमालय और आर्कटिक जैसे हिमखंडों में बर्फ पिघलने लगती है। बीती बरसात में औसत से कम बारिश होने के कारण बर्फ पिघलने की मात्रा और अधिक बढ़ गई है। वायु प्रदूषण से भी हिमखंड दूषित कार्बन की चपेट में आए हैं। उत्तराखंड अंतरिक्ष उपयोग केंद्र ने निष्कर्ष निकाला है कि पिछले 37 सालों में हिमाच्छादित क्षेत्रफल में 26 वर्ग किलोमीटर की कमी आई है। इस क्षेत्र में पहले स्थाई स्नोलाईन 5700 मीटर थी, जो अब 5200 मीटर के बीच घट-ब? रही है। यही बजाय है कि नंदादेवी जैव-मंडल (बायोस्फियर) आरक्षित ऋषि गंगा के दायरे का कुल 243 वर्ग किमी क्षेत्र बर्फ से ढका था, लेकिन यह 2020 में 217 वर्ग किमी ही रह गया है। साफ है, तापमान बढ़ने का सिलसिला बना रहा और यदि बर्फ इसी तरह

Scanned with CamScanner

पिघलती रही तो जीव-जंतुओं और वनस्पतियों के संकट में आने का सिलसिला भी बना रहेगा।

बढ़ते तापमान से हिमखंडों के पिघलने की जो शुरूआत होगी, उसका खतरनाक मंजर बांग्लादेश में भी देखने को मिल सकता है। यहां तबाही का तांडव इसलिए जबरदस्त और व्यापक होगा, क्योंकि बांग्लादेश तीन नदियों के डेल्टा पर आबाद है। यहां के यादातर भूखंड समुद्र तल से महज 20 फीट की ऊंचाई पर स्थित हैं। इसलिए बर्फ की शिलाओं के पिघलने से समुद्र का जलस्तर ऊपर उठेगा तो सबसे यादा जलमग्न भूमि इसी देश की होगी। यहां आबादी का घनत्व सबसे यादा है, इसलिए मानव त्रासदी भी इस देश को ही सबसे यादा झेलनी प? सकती है। बांग्लादेश इस आशंका की चिंता कई बार अंतरराष्ट्रीय मंचों पर उठा चुका है। इस बाबत एक कुशंका यह भी है कि यदि वैश्विक तापमान थोड़ा भी बढ़ता है और हिमखंड पिघलते रहते हैं तो 2050 तक बांग्लादेश में धान की पैदावार 10 प्रतिशत और गेहूं की 30 प्रतिशत घट सकती है।

बढ़ते तापमान को लेकर एक नई आशंका यह भी जताई जा रही है कि इससे दुनिया में कीड़े-मकोड़े और जीवाणु-विषाणु की संख्या अत्यधिक मात्रा में बढ़ेगी। कीड़ों के जीवन-च पर बहुत यादा वैज्ञानिक शोध नहीं हुए हैं। इसका एक बड़ा कारण यह भी है कि 10 मिलीग्राम से कम वजन के कीड़े वैज्ञानिकों की रडार प्रणाली में नहीं आते हैं। इस सच्चाई को जानने के लिए दक्षिण इंग्लैंड में एक रडार लगाया गया था। दरअसल वैज्ञानिकों का ऐसा अनुमान है कि इसी स्थल से यूरोप और अफ्रीका के लिए 35 अरब कीड़े प्रवास यात्रा पर निकलते हैं। इस रडार से 70,000 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में कीड़ों के स्थान परिवर्तन का पता चला है। कीटों पर हालांकि अभी तक व्यापक स्तर पर शोध नहीं हुए हैं। परंतु जितने भी हुए हैं, उस आधार पर सबसे अधिक आबादी धरती पर कीड़ों की ही है। जिस तेजी से ग्लोबल वार्मिंग बढ़ रही है, उसमें निश्चित रूप से कीड़ों की सं या और तेजी से बढ़ेगी, क्योंकि गर्म वातावरण में कीड़े तेजी से बढ़ते हैं। कीड़ों के प्रवास के लिए प्राकृतिक चयन के सिद्धांत को जि मेवार माना जा रहा है। लुंड विश्व-विद्यालय की सुसैन एकीसन के अनुसार, प्रवास के पीछे मु य रूप से अनुवांशिक और आहार प्रणाली जि मेवार होते हैं। चीन से निकला कोरोना विषाणु कोविड-19 भी दूषित आहार प्रणाली का कारक माना जा रहा है। चमगादड़ या पेंगोलिन को चीनियों द्वारा आहार बनाए जाने के कारण यह पहले चीनियों और फिर हवाई व जहाजी यात्राओं के जरिए दुनिया मे फैल गया। वैज्ञानिकों का दावा है कि यदि वैश्विक तापमान बढ़ता है तो उसी अनुपात में इनकी संख्या में बढ़ोत्तरी होना तय है। क्योंकि गर्म वातावरण इनके पनपने में अनुकूल रहता है। इसलिए यदि तापमान बढ़ने का सिलसिला निरंतर बना रहता है तो यह दुनियाभर के परिस्थितिकी तंत्र को प्रभावित कर मानव समुदायों के लिए अत्यंत हानिकारक साबित होगा।

Scanned with CamScanner

अमेरिका में सिखों पर नस्लीय हमला

प्रमोद भार्गव

अमेरिका में सिख समुदाय में भय और दहशत का माहौल है क्योंकि यहां अमेरिकी नागरिकों की तुलना में सिखों से ज्यादा भेदभाव और नस्लीय उत्पीड़न का शिकार होना पड़ता है। अमेरिका में रहने वाले प्रवासी भारतीय मानकर चल रहे हैं कि यह हमला एशियाई मूल के लोगों और प्रवासियों के खिलाफ श्वेत अमेरिकी नागरिकों में पनप रही नस्लीय नफरत का परिणाम है। कोरोना फैलने के बाद अमेरिका में कालों पर गोरों द्वारा नस्लीय टिपण्णियों और हमलों की संख्या भी ज्यादा बढ़ गई है।

प्रवासी मुक्त अमेरिका के मुद्दे पर चुनाव जीते डोनाल्ड ट्रंप के राष्ट्रपति बनने के बाद से ही अवसरों की भूमि माने जाने वाले अमेरिका में नस्लीय भेद हिंसा का रूप लेने लगा था। लेकिन बाइडेन के राष्ट्रति बनने के बाद उम्मीद जगी थी कि अब नस्लीय भेद कम होगा। किंतु इस ताजा हमले ने जता दिया है कि गोरों में नस्लीयता चरम पर है। ट्रंप के राष्ट्रपति बनने के बाद पहला हमला दो भारतीय युवा इंजीनियरों पर हुआ था। इनमें से हैदराबाद के एक श्रीनिवास कुचिबोतला की मौके पर ही मौत हो गई। दूसरा अलोक मदसानी घायल हो गया था। यह हमला 51 वर्षीय सेवानिवृत्त अमेरिकी नौसैनिक एडम पुरिनटोन ने किया था। हालांकि अमेरिका में नस्लीय हमले कोई नहीं बात नहीं हैं, बराक ओबामा के दूसरी बार राष्ट्रपति चुने जाने के बाद से ही गैर अमेरिकी लोगों पर हमलों का सिलसिला जारी है।

ओबामा जब अमेरिका के दूसरी बार राष्ट्रपति चुने गये थे तब यह बात उजागर हुई थी कि अमेरिका में नस्लीयता बढ़ रही है। क्योंकि 39 फीसदी गैर अमेरिकियों के वोट ओबामा को हासिल हुये थे। इनमें अफ्रीकी और एशियाई मुल्कों के लोग थे। मूल अमेरिकियों के केवल 20 फीसदी वोट ओबामा को मिले थे। यह इस बात की तसदीक थी कि अमेरिका में नस्लीयता की खाई लगातार चौड़ी हो रही है और प्रशासन उसे नियंत्रित नही कर पा रहा है। 5 अगस्त 2015 को रंगभेदी मानसिकता के चलते ही गुरुद्वारे पर हुए हमले में सात सिख मारे गए थे। बाद में हमलावर वेड माइकल पेज ने खुद को गोली मारकर आत्महत्या कर ली थी। श्वेत नस्लवादी पेज फौज में नौकरी कर चुका था।

इसके पहले न्यूजर्सी में 24 दिसंबर 2014 को गुजराती व्यापारी अश्वनी पटेल

Scanned with CamScanner

और फरवरी 15 में अमित पटेल की हत्याएं हुई थीं। 6 फरवरी 2015 को सुरेश भाई पटेल पर पुलिसकर्मियों ने ही बर्बर हमला किया था। इस हमले में वे स्थाई विकलांगता के शिकार हो गए थे। बाद में अदालत ने हमलावर पुलिसकर्मी एरिक पार्कर को बरी कर दिया था। सुनंदो सेन को एक अमेरिकी महिला ने चलती भूमिगत रेल से सिर्फ इसलिए धक्का दे दिया था, क्योंकि वह रंगभेदी मानसिकता के चलते गैर अमेरिकियों से नफरत करने लगी थी। ऐरिका मेंडेज नाम की इस महिला ने अदालत में बेझिझक कबूल भी किया कि वह हिंदुओं, सिख और मुसलमानों से नफरत करती है, इसलिए उसने सेन की हत्या करके कोई गलत काम नहीं किया है। दरअसल अमेरिका में 9/11 के आतंकवादी हमले के बाद भारत और पाकिस्तान के लोगों पर हमले तेज हुए है। दाड़ी और पगड़ी वालों को लोग नस्लीय भेद की दृष्टि से देखने लगे हैं।

अमेरिका में विस्कोन्सिन गुरुद्वारे पर हुए हमले के बाद ही यह तय हो गया था कि यहां अश्वेतों के लिए नहीं रहने लायक पृष्ठभूमि तैयार हो रही है। इस घटना के बाद जिन तथ्यों का खुलासा हुआ वे हैरानी में डालने वाले रहे हैं। दरअसल अश्वेत बाराक ओबामा के राष्ट्रपति जैसे सर्वोच्च पद पर बैठते ही अमेरिका में बाकायदा श्वेतों को

अमेरिका में विस्कोन्सिन गुरुद्वारे पर हुए हमले के बाद ही यह तय हो गया था कि यहां अश्वेतों के लिए नहीं रहने लायक पृष्ठभूमि तैयार हो रही है। इस घटना के बाद जिन तथ्यों का खुलासा हुआ वे हैरानी में डालने वाले रहे हैं। दरअसल अश्वेत बाराक ओबामा के राष्ट्रपति जैसे सर्वोच्च पद पर बैठते ही अमेरिका में बाकायदा श्वेतों को सर्वोच्च हराने का सांगठनिक आंदोलन शुरू हो गया था। लिहाजा यहां हमले नितांत सोची-समझी साजिशें हैं।

सर्वोच्च हराने का सांगठनिक आंदोलन शुरू हो गया था। लिहाजा यहां हमले नितांत सोची-समझी साजिशें हैं। गुरुद्वारे पर जिस वेड माइकल पेज नामक सख्स ने हमला किया था, वह कोई मामूली सिरफिरा व्यक्ति नहीं था, बल्कि अमेरिकी सेना के मनोविज्ञान अभियान का विशेषज्ञ था। और नस्लीय आधार पर गोरों को सर्वश्रेष्ठ मानने वाले नव-नाजी गुट एंड एपैथी से जुड़ा था। एरिका मेंडेज भी दक्षिणपंथी सोच की महिला है और एंड एपैथी समूह की विचारधारा से प्रभावित है। इसी सोच का एडम पुरिनटोन बताया जा रहा है। यही सोच युवा ब्रैंडन स्कॉट की रही है। यह आंदोलन इसलिए भी परवान चढ़ रहा है, क्योंकि इसे दक्षिणपंथी बंदूक लॉबी से भी समर्थन मिल रहा है। नतीजतन अमेरिका में उग्रवादी गोरों के निशाने पर हिंदू, सिख और मुस्लिम आ रहे हैं।

ओबामा जब दूसरी बार अमेरिका के राष्ट्रपति बने थे, तब गैर अमेरिकियों में यह उम्मीद जगी थी कि वह अपने इतिहास की श्वेत-अश्वेत के बीच जो चौड़ी खाई है उसे पाट चुके हैं, क्योंकि अमेरिका में रंगभेद, जातीय भेद एवं वैमनस्यता का सिलसिला नया नहीं है। इसकी जड़ें बहुत गहरी हैं। इन जड़ों की मजबूती के लिये इन्हें जिस रक्त से सींचा गया था वह भी अश्वेतों का था। अमेरिकी देशों में कोल बस के मूल्यांकन को लेकर दो दृष्टिकोण सामने आये हैं। एक दृष्टिकोण उन लोगों का है, जो अमेरिकी मूल

Scanned with CamScanner

के हैं और जिनका विस्तार व अस्तित्व उत्तरी एवं दक्षिणी अमेरिका के अनेक देशों में है। दूसरा दृष्टिकोण या कोल बस के प्रति धारणा उन लोगों की है जो दावा करते हैं कि अमेरिका का वजूद ही हम लोगों ने खड़ा किया है। इनका दावा है कि कोल बस अमेरिका में इन लोगों के लिए मौत का कहर लेकर आया। क्योंकि कोल बस के आने तक अमेरिका में इन लोगों की आबादी 20 करोड़ के करीब थी, जो अब घटकर 10 करोड़ के आसपास रह गई है। इतने बड़े नरसंहार के बावजूद अमेरिका में अश्वेतों का संहार लगातार जारी है। अवचेतन में मौजूद इस हिंसक प्रवृत्ति की जकड़न से आज भी अमेरिका मुक्त नहीं हो पाया है।

अमेरिका में कालों के साथ इस हद तक बुरा बर्ताव रहा है कि उन्हें नागरिक अधिकारों के प्रति लंबा संघर्ष करना पड़ा, तब कहीं जाकर 1965 में कालों को गोरे नागरिकों के बराबर मताधिकार दिया गया। इसके पहले तक काले मताधिकार से वंचित थे। इस अधिकार के मिलने के बाद ही ओबामा का एक श्वेत राष्ट्र का राष्ट्रपति बनना संभव हुआ। बावजूद गोरों और कालों के बीच सामाजिक,आर्थिक एवं शैक्षिक असमानताएं बनी हुई है। जातीय भेद अमेरिका की कड़वी सच्चाई है। इसी वजह से गोरों की बस्तियों में कालों के घर बिरले ही मिलते हैं। अमेरिका में गरीबी रेखा के नीचे जीवन-यापन करने वाले लोग करीब 4.5 करोड़ हैं, इनमें से 80 फीसदी काले हैं। अभी भी अमेरिका में कुल जनसंख्या के बरअक्स कालों की संख्या मात्र 15 फीसदी है। लेकिन वहां की जेलों में अपराधियों की कुल संख्या में 45 फीसदी कैदी काले हैं। यह अमेरिकी रंगभेद की बदरंग तस्वीर है।

अमेरिका में नस्लीय भेद कई स्तरों पर देखने को मिल रहा है। वहां कि ईसाई मिशनरियों ने बाबा रामदेव की योग शिक्षा पर इसलिए रोक लगा दी थी, क्योंकि यह शिक्षा हिंदुओं की सनातन परंपरा से जुड़ी हुई है। फिल्म कलाकार शाहरुख खान और शिल्पा शेट्टी को भी अमेरिका में नस्लीय भेद का सामना करना पड़ा है। अमेरिका के ट्राई वैली नाम के विवि में पढ़ने वाले छात्रों के टखनों में रेडियो कॉलर पहना दिए गए थे। यह पशुवत व्यवहार इसलिए किया गया था, जिससे छात्र भाग न जाएं।

दरअसल, भारतीयों की श्रमसाध्य कर्तव्य निष्ठा का लोहा अमेरिका समेत पूरा विश्व मान रहा है। किंतु भारतीयों का यही समर्पण और सजनता अमेरिका के चरमपंथियों को परेशान कर रही है। भारतीय डॉक्टर व इंजीनियरों को अमेरिकी लोग बेरोजगारी का कारण भी मान रहे हैं। अमेरिका के साथ ब्रिटेन में भी सिख समुदाय के लिए पगड़ी और कटार नस्लभेदी संकट का सबब बन रहे हैं। दरअसल भूमंडलीकरण के बहाने साम्राज्यवादी अवधारणा के ये ऐसे सह-उत्पाद हैं, जो यह तय करते हैं कि धर्मनिरपेक्षता यूरोपीय देशों का महज मुखौटा है, उसके भीतर जातीय और नस्लीय संस्कार तो अंगड़ाई लेते ही रहते हैं।

(लेखक स्वतंत्र टिप्पणीकार हैं।)

Scanned with CamScanner

बुनियादी सुविधाओं से दूर शहरीकरण का बोझ ढोती मलिन बस्तियां

विजया पाठक

इंतजार में हैं कि शायद कभी उनके भी दिन बदलेंगे और स्मार्ट बनते इस देश में शायद उन्हें भी कभी बुनियादी सुविधाएं देखना नसीब होगा। स्मार्ट बनते इस देश में जहां स्मार्ट सिटी बनाने के सपने दिखाए जा रहे हैं। मुफ्त वाईफाई बांटा जा रहा है, वहां उन्हें बिजली, पीने का पानी, स्वच्छता, अस्पताल, पार्क, ट्रांसपोर्ट जैसी बुनियादी सुविधाओं से क्यों वंचित रखा जा रहा है, उन्हें आज तक यह समझ नहीं आया है कि अपने ही देश में उनके साथ यह सौतेला व्यवहार क्यों है?

भारत में जहां हर छठा शहरी नागरिक स्लम बस्तियों में रहने के लिए मजबूर है। जो की इंसानों के रहने के लायक तो कतई भी नहीं है। यहां रहने वाला हर भारतीय शहरी नारकीय जीवन जीने के लिए मजबूर है। आंकड़े दर्शाते हैं कि जहां आंध्र प्रदेश में हर तीसरा शहरी परिवार इन मलिन बस्तियों में रहता है, वहीं ओडिशा में हर 10 घरों में से नौ में या तो जल निकासी की कोई सुविधा नहीं है या तो वो वहां जल निकासी के लिए खुली और बजबजाती नालियां हैं।

Scanned with CamScanner

आज भी गन्दा पानी पीने को मजबूर हैं देश की स्लम बस्तियों में रहने वाले करीब 12 लाख परिवार

देश की स्लम बस्तियों में रहने वाले 01 करोड़ 37 लाख से अधिक में से 12 लाख परिवार आज भी पीने के साफ पानी से वंचित हैं। जिसमें से करीब 60 प्रतिशत घर सिर्फ पांच राज्यों– तमिलनाडु, आंध्रप्रदेश, मध्यप्रदेश, कर्नाटक और पश्चिम बंगाल में हैं। वहीं दक्षिणी भारत के तीन राज्यों में भारत की मलिन बस्तियों के 39 प्रतिशत घरों की आबादी आज भी साफ पानी से वंचित है, जिनमें से यादातर घर तमिलनाडु में हैं। भारत के 100 स्मार्ट शहरों में से 27 शहरों ने अपने 41 स्लम बस्तियों की पुनर्विकास परियोजनाओं के लिए लगभग 3,797 करोड़ रुपये खर्च करने का प्रस्ताव रखा है। स्लम बस्तियों में बसे 10 में से 06 घरों में नहीं है जल निकासी का उचित प्रबंध– भारतीय स्लम बस्तियों में बसे 63 प्रतिशत घरों से अपशिष्ट जल की निकासी की कोई उचित व्यवस्था नहीं है। जबकि 44 प्रतिशत घरों में जल निकासी के लिए खुले और बदबुदार नाले हैं। वहीं 19 प्रतिशत घरों का इन निकासी नालों से कोई कनेक्शन नहीं है। वहीं महाराष्ट्र और चार अन्य राज्यों में इन स्लमों में बसे 61 प्रतिशत घरों से जल निकासी का कोई प्रबंध नहीं है। महाराष्ट्र, धारावी के लिए दुनिया भर में जाना जाता है। जो कि दुनिया के सबसे बड़े स्लम बस्तियों में से एक है, जहां हर 2.1 वर्ग किलोमीटर के दायरे में 10 लाख से भी अधिक लोग रहते हैं। गौरतलब है कि ताजमहल को पछाड़ते हुए धारावी ने जून 2019 में एशिया के शीर्ष 10 सबसे पसंदीदा पर्यटक स्थलों अपनी जगह बनायी थी।

भारत के 65 प्रतिशत शहरों में स्लम बस्तियां देखी जा सकती हैं। शहरों की चकाचौंध भरी दुनिया का हिस्सा होने के बावजूद यह आज भी अंधेरे में क्यों हैं, इनके उत्तर अभी ढूंढना बाकी है। आंकड़ों की मानें तो देश में हर 10 में से छह झुग्गी-झोपड़ी में रहने वाले लोग इन गन्दी बदबूदार नालियों के करीब रहते हैं, वहीं हर 10 में से चार को आजादी के 72 साल बाद भी साफ़ पानी

Scanned with CamScanner

क्या सच होगा सबका अपने घर का सपना?

जहां राज्य सरकारें मलिन बस्तियों के सुधार के लिए जिम्मेदार हैं, वहीं केंद्र की प्रधानमंत्री आवास योजना (शहरी) इनके पुनर्विकास के लिए उत्तरदायी हैं। दुनिया भर की लगभग एक चौथाई शहरी आबादी स्लम बस्तियों में रहती है। वहीं आने वाले 10 वर्षों में, भारत की 50 प्रतिशत आबादी नगरों में रहने लगेगी। गौरतलब है कि भारत की वर्तमान आबादी का 28 प्रतिशत हिस्सा शहरों में रहता है। शहरी आबादी में होने वाली इस बेतहाशा वृद्धि का सीधा प्रभाव उनके आवास पर पड़ेगा, जिससे आने वाले वर्षों में इन मलिन बस्तियों में रहने वाली आबादी में तीव्र वृद्धि होना लाजिमी है। भारत की 2613 शहरों में आबादी इन मलिन बस्तियों में रहती है। जिनमें से 57 फीसदी तमिलनाडु, मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश, कर्नाटक और महाराष्ट्र में हैं। यह राज्यों की जिम्मेदारी है कि वे अपने नागरिकों को आवास और अन्य बुनियादी सुविधाएं प्रदान करें। हालांकि जून 2015 में, प्रधानमंत्री आवास योजना (शहरी) रायों एवं केंद्र शासित प्रदेशों को केंद्रीय सहायता प्रदान करने के उदेश्य से शुरू की गयी थी, जिससे शहरों में रहने वाले गरीब तबके और अन्य कमजोर वर्ग को आवासीय सुविधा मिल सके। केंद्रीय आवास एवं शहरी मामलों के विभाग ने सभी रायों को 2022 तक सभी स्वीकृत हो चुके मकानों को शीघ्रता से पूरा करने के लिए कहा है। वहीं देश भर में रायों और केंद्र शासित प्रदेशों से अब तक प्राप्त प्रस्तावों के आधार पर पीएम आवास योजना के तहत 81 लाख घरों के निर्माण को मंजूरी दे दी गई है, जिनमें से 47 लाख घर निर्माणाधीन हैं, जबकि 26 लाख बन चुके हैं। हम आशा करते हैं कि आने वाले भारत में हर किसी के अपने घर का सपना सच हो सकेगा और आने वाले कल में हर कोई भी शहरी इन गन्दी बस्तियों में नारकीय जीवन जीने के लिए मजबूर नहीं होगा।

जैसी बुनियादी सुविधा नहीं मिल पायी है। जो साफ़ दर्शाता है कि इन गन्दी बस्तियां में रहने वाले लोग किस तरह इस विकसित समाज, राजनैतिक गलियारों और प्रशासन की बेरुखी का शिकार हैं।

क्या आप जानते हैं? भारत में आजादी के 72 सालों के बाद भी स्लम में रहने वाले 35 प्रतिशत घरों को पीने का साफ पानी उपलब्ध नहीं है। वहीं, दूसरी ओर 63 प्रतिशत घरों से गंदे पानी की निकासी का कोई प्रबंध नहीं है और कहीं यदि है भी तो वह खुली बदबूदार नाली के रूप में है। इस सूची में आंध्रप्रदेश सबसे ऊपर है, जहां शहरी आबादी का 36.1 प्रतिशत हिस्सा इन मलिन बस्तियों में रहता है। वहीं अन्य राज्यों जैसे- छत्तीसगढ़, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, ओडिशा, पश्चिम बंगाल, सिक्किम, जम्मू कश्मीर और हरियाणा की शहरी आबादी का एक बड़ा हिस्सा इन मलिन बस्तियों में रहने के लिए मजबूर है। डाउन टू अर्थ द्वारा प्रकाशित स्टेट ऑफ इंडिया एनवायरनमेंट इन फिगर्स 2019 में छपे आंकड़ों के अनुसार ओडिशा की इन मलिन बस्तियों में रहने वाले 64.1 प्रतिशत घरों में अब तक पीने का स्वच्छ पानी नहीं पहुंच पाया है, वहीं दूसरी ओर इन बस्तियों के 90.6 प्रतिशत घरों से जल निकासी का कोई प्रबंध नहीं है, यदि है भी तो वह गन्दी, खुली बदबदार नाली के रूप में है, जिससे आये दिन यहां रहने वाले लोगों के बीमार होने का खतरा बना रहता है।

Scanned with CamScanner

क्या कश्मीर में फिर बनने लगे 1990 जैसे हालात?

आतंकी बना रहे गैर कश्मीरों को निशाना

नवीन शर्मा

साल 1989 और 2000 के बीच, जम्मू-कश्मीर में 55,538 हिंसक घटनाएं दर्ज की गई और मारे गए 15,937 आतकंवादियों मे से 3000 से ज्यादा पाकिस्तान और अफ़ग़ानिस्तान के थे। सुरक्षा एजेंसियों को कश्मीर घाटी में शांति स्थापित करने में कई साल लग गए। इसी समय में एलओसी पर चौकसी बढ़ाने से सीमा पार आतंकवाद में कमी आयी।

कश्मीर में 1990 जैसे हालात बनाने की साजिश रची जा रही है। क्योंकि घाटी के आतंकी इस बार गैर कश्मीरियों को अपना निशाना बना रहे हैं। पिछले कुछ दिनों में कोई आधा दर्जन मजदूरों को आतंकियों ने निशाना बनाया है। यही कारण है कि अब गैर कश्मीरी नागरिक कश्मीर छोड़कर जम्मू या अपने राज्यों की ओर लौट रहे हैं। हालांकि केन्द्र की मौजूदा मोदी सरकार जम्मू-कश्मीर की इन घटनाओं पर पैनी नजर रखे हुए हैं। पिछले दिनों गृहमंत्री अमित शाह भी कश्मीर

Scanned with CamScanner

के दौरे पर गए थे। उन्होंने भरोसा भी दिलाया था कि राज्य में रहने वाले स्थानीय और बाहरी नागरिक सुरक्षित हैं और उन्हें डरने की जरूरत नहीं है।

वर्तमान में यह हालात 1990 के दौर की याद दिलाते हैं। चार अल्पसंख्यकों की हत्या कश्मीर के लिए कोई नई बात नहीं है। सिर्फ अल्पसंख्यक ही नहीं मुस्लिमों की भी हत्या हुई है। आंकड़ों के खेल में जाएंगे तो मरने वालों में कश्मीरी मुस्लिम भी हजारों में हैं। एक बार फिर कश्मीर के मौजूदा हालात के बीच अपने लिए अच्छे दिनों की उम्मीद लगाए बैठे गैर मुस्लिम समुदाय के सामने खड़ा है। मात्र तीन दिन में आतंकियों ने पांच लोगों की हत्या की है। इनमें से चार कड़ी सुरक्षा व्यवस्था वाले श्रीनगर में ही मारे गए हैं। मृतकों में तीन अल्पसंख्यक हैं। यही कारण है कि कुछ दिन पहले तक रात को भी गुलजार नजर आने वाले बाजारों में शाम को ही सन्नाटा पसरा नजर आ रहा है। जो कि कश्मीर के हालात की पूरी कहानी सुना रहा है। कुछ समय से ऐसे हमलों की सूचनाएं सिर्फ खुफिया एजेंसियों तक ही नहीं बल्कि आम लोगों में भी ठीक उसी तरह चर्चा का विषय बनी हुई थीं, जिस तरह 1990 में आतंकी हिंसा का दौर शुरू होने से पहले कश्मीर में कुछ बड़ा होने की बातें होती थीं। बीते साल कश्मीर में मंदिरों पर पेट्रोल बम से हमले से लेकर माहौल बिगाड़ने की कई घटनाएं हुई। 1990 से पहले भी इस तरह की घटनाओं को सुनियोजित तरीके से अंजाम दिया गया था। अगर इन हत्याओं को नहीं रोका गया तो कश्मीर में हिंदुओं या गैर मुस्लिम लोगों को रोकना मुश्किल हो जाएगा।

कश्मीर की राजनीतिक समस्याएं लंबे समय से चली आ रही हैं, फिर भी पिछले दशकों के संघर्ष के बावजूद यहां की अर्थव्यवस्था अधिकांश अन्य राज्यों की तुलना में बेहतर रही है। अनेक आर्थिक और सामाजिक सूचकांकों पर जम्मू और कश्मीर बेहतर रहा है। अगस्त से दिसंबर 2019 के बीच अकेले कश्मीर के उद्योगों को अनुमान है कि 18 हजार करोड़ रुपये का नुकसान हुआ। तकरीबन पांच लाख कश्मीरी बेरोजगार हो गए। जम्मू और घाटी, दोनों ही जगहों पर कभी बागवानी और हॉस्पिटेलिटी क्षेत्र फलते-फूलते थे, केंद्र सरकार की कार्रवाई के बाद उन्हें भी नुकसान हुआ।

कश्मीरी पंडितों की संपत्ति छुड़ाने से बौखलाए हैं आतंकी

इस समय कश्मीर में कश्मीरी हिंदुओं की संपत्ति पर कब्जे छुड़ाने में प्रशासन सक्रिय है। इसी बीच आतंकियों ने चार अल्पसंख्यकों को मार डाला। ऐसा कर उन्होंने कश्मीर में लौटने के इच्छुक विस्थापितों को रोकने का प्रयास किया है। हालांकि कड़ी कार्रवाई से कश्मीर घाटी में सुरक्षा के हालात सुधरे हैं। वर्ष 2019 में अनुमानतः आतंकवाद की 135 घटनाएं हुई। 2020 के उत्तरार्ध में कम से कम 80 घटनाएं हुई हैं। ऐसी घटनाओं में स्थानीय कश्मीरियों के मारे जाने का अनुपात बढ़ा है। इस बीच कश्मीर के अशांत माहौल से फायदा उठाने की पाकिस्तान की सात दशक से जारी कोशिशें जारी रहीं। रिपोर्ट के मुताबिक अगस्त 2019 के घटनाक्रम के बाद पाकिस्तान ने आतंकवादियों की घुसपैठ के लिए अभियान तेज करने के साथ ही सीमा पार से फायरिंग तेज की। जहरीले सोशल मीडिया अभियान के जरिये कश्मीरियों को भड़काने की कोशिश की। भारत सरकार की कार्रवाइयों के कारण इस विवाद में चीन सक्रियता के साथ पाकिस्तान के साथ खड़ा हो गया।

Scanned with CamScanner

समाजसेवा में अग्रणी योगदान देने वाले राजेश यादव अंतरराष्ट्रीय मंच से होंगे सम्मानित

समता पाठक

होशंगाबाद जिले से महज 07 किलोमीटर की दूरी पर स्थित एक छोटा सा गांव पतलई खुर्द में जन्मे राजेश यादव का आज समाजसेवा में योगदान के लिए जाना पहचाना नाम है। पारिवारिक और सामाजिक जिम्मेदारियों को निभाते हुए राजेश यादव समाजसेवा के कार्य करने के लिए हमेशा तैयार रहते हैं। कुशल नेतृत्वकर्ता और मिलनसार व्यक्तित्व के धनी राजेश यादव ने जीवन में अनेक संघर्षों का सामना करते हुए आज समाजसेवा के क्षेत्र में मुकाम हासिल किया है। समाजसेवा में बेहतर योगदान के लिए इन्हें नेपाल के लुंबिनी में अंतरराष्ट्रीय मंच से पर्यावरण योद्धा सम्मान 2021 के लिए चुना गया है।

सामाजिक क्षेत्र में योगदान के दो दशक

राजेश यादव की शुरू से ही सामाजिक गतिविधियों में ललक और रुझान रहा। स्कूली शिक्षा के दौरान भी राष्ट्रीय सेवा योजना, नेहरू युवा केन्द्र से जुड़कर ग्रामों में जन-जागृति के कार्य भी किए, जिसमें, कलेक्टर, एसडीएम और राज्य अधिकारियों

बक्सवाहा प्रवास के दौरान जगत विजन मासिक पत्रिका की संपादक विजया पाठक की मुलाकात राजेश यादव से हुई थी।

Scanned with CamScanner

जब विजया पाठक बक्सवाहा गई थीं तब उनकी मुलाकात पर्यावरणविद सामाजिक कार्यकर्ता अमित भटनागर, राजेश यादव से हुई। अमित भटनागर, राजेश यादव ने काफी शैलचित्रों को खोजा है। विजया पाठक को इन्होंने ही शैलचित्रों के बारे में बताया था।

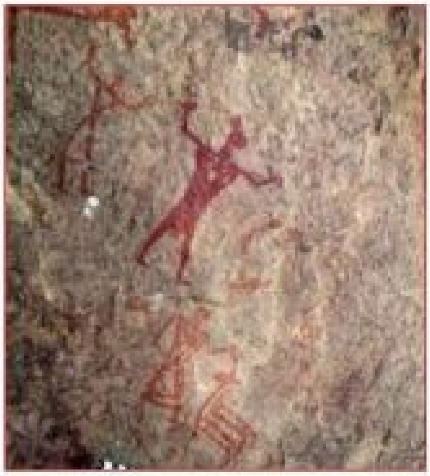

के द्वारा कई प्रशंसा-पत्र प्रमाण-पत्र भी मिले। बचपन से ही वह समाज में सकारात्मक बदलाव करने की दिशा में चल पड़े। आज से 20 साल पहले आपने एकलव्य तराशी संस्था से जुड़कर लोगों में जन-जागृति के लिए नुक्कड़ नाटक, कठपुतली नचाना, रंगमंच की गतिविधि करना, लेखन, कार्टून इत्यादि के माध्यम से बच्चों में शिक्षा के प्रति अलग जगाने का कार्य किया। बाल समूह का संचालन भी किया।

समाज कार्य में योगदान

जिले की स्थानीय/राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय गैर-शासकीय संस्थाओं एवं संगठनों से जुड़कर सामाजिक के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान दिया। आप की विशेषज्ञता पंचायती राज सशक्तिकरण, आर्थिक रूप से कमजोर शिक्षा से वंचित बालक/बालिका मुख्यधारा से जोड़ना, शिशु एवं मातृ स्वास्थ्य और महिला सशक्तिकरण, जैव विविधता संरक्षण के मुद्दों पर रही है। विशेषज्ञता मुद्दों की पैरवी करना, परियोजनाओं का प्रबंधन, शासकीय योजनाओं का प्रचार-प्रसार एवं निगरानी, शोध कार्य प्रबंधन, अवलोकन और क्रियान्वयन के कार्य के साथ ही लेखन कार्य भी किए गए। साथ ही बुंदेलखंड में पंचायती राज सशक्तिकरण, शिक्षा से वंचित आर्थिक रूप से कमजोर बालक/बालिकाओं को मुख्यधारा से जोड़ना, गैर शासकीय विधालय में 10 बच्चों को मुक्त शिक्षा दिलाने में सहयोग करना, शिशु एवं मातृ स्वास्थ्य और महिला सशक्तिकरण, जैव विविधता संरक्षण को लेकर नियमित कार्य कर रहे हैं।

संगठनात्मक गतिविधियां

देश के जाने-माने संगठन, जो गरीब वंचित की आवाज बनकर मध्यप्रदेश में जन-जागृति और जमीनी लड़ाई लड़कर अधिकार आधारित आमजन को न्याय दिलाने का कार्य कर रहे हैं। इन संस्थाओं के साथ जुड़कर आपने मध्यप्रदेश के कई संगठनों के साथ कार्य किया, जिसमें प्रमुख रुप से नर्मदा बचाओ आंदोलन, खेड़त मजदूर चेतना संगठन, दलित आदिवासी जागृत संगठन के साथ ग्रामसभा सशक्तिकरण, आदिवासी समाज क्षमतावर्धन, पंचायतीराज में महिलाओं की भूमिका एवं महिला सशक्तिकरण और युवाओं को शासन की योजनाओं से जुड़ने की दिशा में कार्य किए गए। डूब प्रभावित परिवारों को वन अधिकार पत्र, रोजगार गारंटी अधिनियम के रोजगार, सूचना के अधिकार अधिनियम की उपयोगिता, सार्वजनिक वितरण प्रणाली और ग्रामसभा के महत्व और अधिकार पर सघन रूप से कार्य किया।

महत्वपूर्ण योगदान

छतरपुर जिले में बक्सवाहा, जो आज विश्व स्तरीय पहचान बना चुका है। हीरे की चमक से राज्य और केंद्र सरकार दो लाख पन्द्रह हजार आठ सौ पचहत्तर पेड़ काटकर हीरा खनन करने पर उतारू है। यह परियोजना भयंकर विनाशकारी है। विनाश की ऐसी घटनाओं को रोकने के लिए संघर्षशील राजेश यादव ने बक्सवाहा जंगल बचाओ अभियान, राष्ट्रीय जंगल बचाओ अभियान की मुहिम को देश-विदेश में चलाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। अभियान को सोशल मीडिया, सोशल नेटवर्क ग्रुप, पीपल-नीम-तुलसी अभियान पटना के डॉ. धर्मेंद्र कुमार के साथ मिलकर युवाओं एवं गैर शासकीय संस्थाओं में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। परिणामस्वरूप एनजीटी भोपाल एवं हाईकोर्ट जबलपुर ने इस परियोजना पर रोक लगा दी है।

सम्मानित/अवॉर्ड

अपने कार्य क्षेत्र में मेहनत और लगन से कार्य करने की दिशा में शत-प्रतिशत लक्ष्य हासिल करने में शासकीय एवं गैर-शासकीय संस्थाओं से सम्मान प्राप्त किया है। वर्तमान में नेपाल के लुंबिनी में अंतरराष्ट्रीय मंच से पर्यावरण योद्धा सम्मान 2021 के लिए नाम घोषित किया गया है।

Scanned with CamScanner

मध्यप्रदेश पर्यटन बोर्ड बना अनुभवहीन अधिकारियों का अड्डा

विजया पाठक

मध्यप्रदेश के लिए कही जाने वाली कहावत एमपी अजब है सबसे गजब है..., आपने कई बार सुनी होगी। इस कहावत का अक्सर उपयोग तभी और अधिक किया जाता है जब प्रदेश में अजीब-गरीब निर्णय लिये जाए। ऐसा ही निर्णय शिवराज सरकार ने वर्ष 2017 में लिया था जब प्रदेश में मध्यप्रदेश पर्यटन बोर्ड की स्थापना की गई। खास बात यह है कि बगैर नीति के शुरू किया गया पर्यटन बोर्ड आज जनता की कमाई के करोड़ों रुपये ऐसे ही उड़ा रहा है। ऐसे में अपनी स्थापना को लेकर एक बार फिर मध्यप्रदेश पर्यटन बोर्ड सवालों के घेरे में खड़ा हो गया है।

वरिष्ठ आईएएस अफसर का चालू दिमाग है इसके पीछे

सूत्रों की मानें तो मध्यप्रदेश पर्यटन बोर्ड की स्थापना के पीछे वरिष्ठ आईएएस अफसर हरिरंजन राव का मास्टरमाइंड दिमाग है। उन्होंने मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान से हरि झंडी लेकर प्रदेश में पहली बार पर्यटन बोर्ड की स्थापना की स्वीकृति ली। बोर्ड बनाने की स्वीकृति के लिए उनके इशारे पर ही फरवरी 2017 में कैबिनेट बैठक पचमढ़ी में रखी गई और बोर्ड बनाने की सहमति उसी बैठक में हुई।

काम कुछ नहीं फूंक दिये करोड़ों

देखा जाए तो आज मध्यप्रदेश का पूरे देश सहित विदेशों में जो भी नाम है उसका श्रेय मप्र पर्यटन निगम के अधिकारियों को जाता है। निगम के अंतर्गत ही होटल संचालन से लेकर एडवेंचर स्पोर्ट्स एक्टिविटी, सहित प्रदेश के पर्यटन स्थलों की ब्रॉडिंग और प्रचार-प्रसार का काम सफलता पूर्वक किया जाता रहा है। लेकिन वरिष्ठ

Scanned with CamScanner

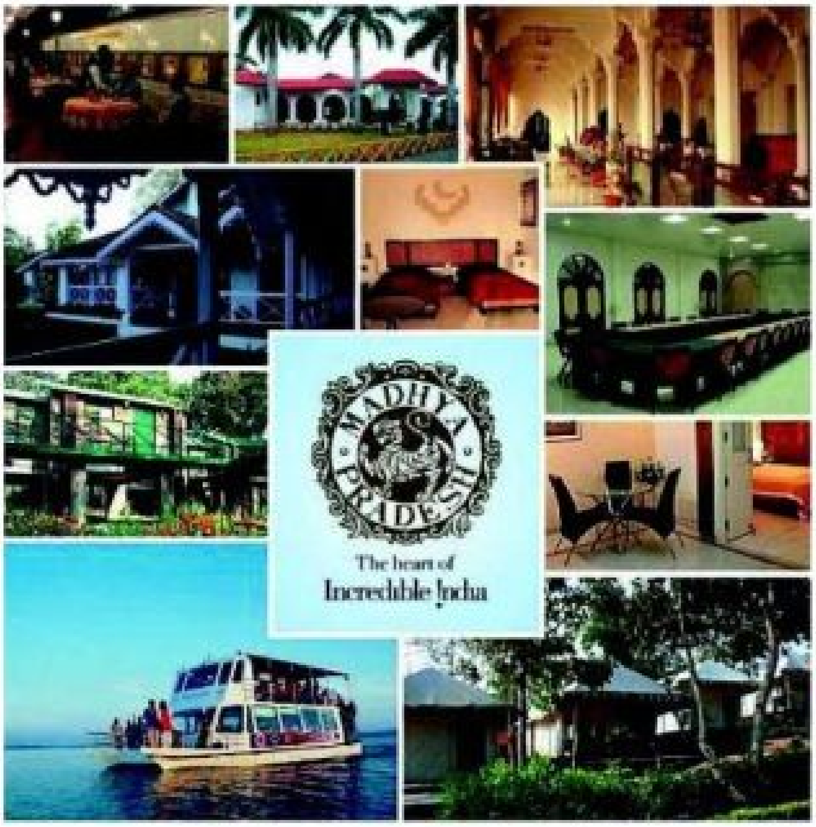

आईएएस अफसर को यह बात रास नहीं आई और उन्होंने बोर्ड का गठन करने का गणित निकाला। बोर्ड के गठन के बाद पर्यटन निगम के अधिकारियों के पास अब सिर्फ होटल संचालन और बोट क्लब के संचालन की जिम्मेदारी मात्र रह गई है।

अनुभवहीन है बोर्ड के अधिकारी

हरिरंजन राव के समय जैसे ही पर्यटन बोर्ड की स्थापना की गई। आनन-फानन में बोर्ड में अधिकारियों का कोरम पूरा करने के लिए इधर उधर से अनुभवहीन अधिकारियों को यहां प्रतिनियुक्ति पर रख लिया गया। इसमें नाम मात्र अधिकारियों को छोड़ दे तो इसके अलावा कोई भी ऐसा अधिकारी नहीं है जिसे पर्यटन के क्षेत्र में काम करने का पूर्व में कोई अनुभव रहा हो। खास बात यह है कि इसमें कॉलेज के प्रोफेसर से लेकर महिला बाल विकास में काम करने वाले अधिकारी, राय शिक्षा मिशन से जुड़े लोग, आयुष विभाग, इंदिरा, पुलिस विभाग के अधिकारी, गरीबी हटाओ, पशु चिकित्सा विभाग में कार्य करने वाले अधिकारी मध्यप्रदेश पर्यटन बोर्ड जैसे अहम विभाग में काम करने के लिए तैनात किये गए है जो मध्यप्रदेश के प्रचार-प्रसार, संवर्धन, कौशल विकास, साहसिक और जल ीड़ा सहित फिल्म टूरिम से जुड़े कार्यों के नाम से करोड़ों रुपए का गबन कर रहे है।

राज्य को खोखला होने से बचाइए मुख्यमंत्री जी

राज्य की जागरुक नागरिक और पत्रकार होने के नाते मैं मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान से गुजारिश करती हूं कि वो इस दिशा में गंभीरता से विचार करें और यह समझने की कोशिश करें कि क्या सच में राज्य में पर्यटन बोर्ड की उपयोगिता है। बोर्ड के लिए अलग से कार्यालय में बनाने के लिए 4 करोड़ रुपए से अधिक की राशि खर्च करने की उपयोगिता थी। अगर बोर्ड बनाना ही था तो कुछ चुनिंदा और अनुभवी अधिकारियों के साथ बोर्ड का गठन कर उसका कार्यालय पर्यटन निगम के भवन में संचालित किया जाना चाहिए था। इससे हर महीने लाखों करोड़ों रुपयों कर्मचारी-अधिकारियों को दी जाने वाली सैलरी और कार्यालय के खर्चे से बचा जा सकता है। मुख्यमंत्री जी चंद अधिकारियों की वजह से राज्य को खोखला होने से बचाना आपका प्रथम दायित्व है।

निगम के अंतर्गत ही होटल संचालन से लेकर एडवेंचर स्पोर्ट्स एक्टिविटी, सहित प्रदेश के पर्यटन स्थलों की ब्रांडिंग और प्रचार-प्रसार का काम सफलता पूर्वक किया जाता रहा है। लेकिन वरिष्ठ आईएएस अफसर को यह बात रास नहीं आई और उन्होंने बोर्ड का गठन करने का गणित निकाला।

निगम की माली हालत खराब

मध्यप्रदेश पर्यटन बोर्ड बनने के पहले मध्य प्रदेश पर्यटन निगम के पास सारे वित्तीय पॉवर थे, लेकिन अब सारे वित्तीय पॉवर बोर्ड के पास है। जिससे निगम की वित्तीयय स्थिति खराब हो चुकी है। बोर्ड बनने से पहले पर्यटन निगम बहुत ऊंचाई पर था अब बहुत स्थिति खराब है। निगम का सिर्फ होटलो से कमाओं ओर सैलरी बांटो की जिम्मेदारी दी गई है। मध्यप्रदेश पर्यटन बोर्ड में बनने के से मध्यपप्रदेश पर्यटन निगम को बहुत नुकसान हो रह है। केन्द्र सरकार द्वारा दिये जाने वाला अनुदान भी पर्यटन बोर्ड को आता है। मध्यप्रदेश पर्यटन बोर्ड के मुख्यमंत्री अध्यक्ष है जो प्रमुख सचिव को सारे अधिकार दिये हुये है। इतना ही नहीं पहले निगम द्वारा प्रसार-प्रसार करने के लिये पत्र-पत्रिकाओं को विज्ञापन दिये जाते थे। लेकिन बोर्ड बनने के उपरांत न तो प्रचार-प्रसार करने के लिये विज्ञापन भी नही दिये जा रहे है। जबकि केन्द्र सरकार द्वारा प्रचार-प्रसार का पैसा आता है। जिसका कोई हिसाब ही नही है। इसकी जांच होना चाहिए।

Scanned with CamScanner

अपना वजूद खोती मजदूर यूनियनें

मणिशंकर पाण्डेय

आज से करीब सात दशक पहले तक मजदूर एकता का नारा बुलंद हुआ था। देश में मजदूर यूनियन का राज हुआ करता था। मजदूर यूनियन की एक आवाज पर देश ठहर जाता था। रोड, बैंक, रफ्तार, स्कूल कॉलेज, बाजार सब जगह कर्फ्यू जैसा सन्नाटा पसर जाता था। लेकिन आज आलम बदल चुका है। मजदूर यूनियन तो हैं लेकिन, रुतबे और असर में बेहद अंतर आ गया है। आज की मजदूर यूनियनें तब की मजदूर यूनियनों से बेहद कमजोर हैं। इससे यह बात भी सिद्ध होती है कि इन यूनियनों द्वारा बुलाई गई हड़तालें भी अपना वजूद खो चुकी हैं। ऐसा शायद इसलिए भी है क्योंकि 2002 में देश की शीर्ष अदालत जबरन हड़ताल को गैरकानूनी करार दे चुकी है। वजह मजदूर संगठनों का लगातार कमजोर होना हो या फिर आर्थिक उदारीकरण, मजदूर कल भी मुश्किल में था और आज भी दिक्कतों से घिरा है। देश के बड़े मजदूर संगठन सीटू के राष्ट्रीय अध्यक्ष ए के पद्मनाभन कहते हैं, -दरअसल, मजदूर संगठनों ने असंगठित मजदूरों पर ध्यान ही नहीं दिया, जबकि हमें यह पता था कि सबसे ज्यादा मजदूर इसी क्षेत्र में है। जानकारों का मानना है कि यह बदलाव का दौर है। एटक के राष्ट्रीय अध्यक्ष के मुताबिक पूरी दुनिया में मजदूर संगठनों को कभी न कभी इस तरह की स्थिति का सामना करना पड़ा है, लेकिन इस चुनौती से निपटा भी जा सकता है। हालांकि, कुछ लोग मानते हैं कि श्रमिक आंदोलन कमजोर नहीं पड़ रहे, बल्कि अपने चेहरे बदल रहे हैं। मजदूर आंदोलनों का अध्ययन करने वाले दिल्ली विश्वविद्यालय के डॉ. प्रभु महापात्रा का कहना है, मैं नहीं मानता कि देश में श्रमिक आंदोलन कमजोर पड़े हैं। हां, आंदोलन का चरित्र बदल गया है।

आउटसोर्सिंग ने ढाया मजदूरों का संकट

आउटसोर्सिंग ने भी मजदूरों का संकट बढ़ाने में अहम भूमिका निभाई है। उपक्रम सार्वजनिक क्षेत्र के हों या निजी क्षेत्र के, मैनजमेंट स्थायी कर्मचारी रखने के लिए तैयार नहीं हैं। वे दो-तीन साल के कांट्रेक्ट पर ही कर्मचारियों की भर्ती को तवज्जो देते हैं। हिन्द मजदूर सभा के सचिव आर.ए. मित्तल कहते हैं, अब स्थायी या लम्बे समय तक एक जगह पर नौकरी करने का दौर खत्म हो गया है। यहां तक कि सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों में भी अस्थायी कर्मचारियों का आंकड़ा बढ़ रहा है। सीआईआई की लेबर डेस्क की प्रमुख इंद्राणी कौर भी तथ्य की पुष्टि करती हैं। उनके मुताबिक, कम्पनियां, मुलाजिमों को इसलिए ठेके पर रखने लगी हैं, क्योंकि मांग और आपूर्ति में

Scanned with CamScanner

आईटी-टेलीकॉम जैसे सेक्टरों में बनेंगी। लेकिन वहां प्रोफेशनल्स की जरूरत होगी, न कि मजदूरों की। अगर ऐसा होता है तो मजदूर संगठनों की ताकत घटना स्वाभाविक है। श्री सीमेंट्स, ब्यावर (राजस्थान) के जॉइंट वीपी (एचआर) एस आर सिंघवी कहते हैं, ज्यादातर कंपनियों को समझ में आ गया है कि कर्मचारियों से कलह से कुछ हासिल होने वाला नहीं है। इसलिए कम्पनियां अब इंडस्ट्रियल रिलेशन (आईआर) के साथ-साथ एचआर को भी पर्याप्त अहमियत देने लगी है। हिन्दुस्तान मोटर्स के जनरल मैनेजर राजीव सक्सेना कहते हैं, अब पहले की तरह न तो मैनेजमेंट है और न ही कर्मचारी। दोनों एक दूसरे से भावनात्मक स्तर पर नहीं जुड़े हैं। बेहतर यही है कि दोनों टकराव का रास्ता छोड़कर आगे बढ़ें। एक और बात जो मजदूर संगठनों के खिलाफ जाती है वह यह कि उनसे जुड़े टकराव समवर्ती सूची में आते हैं। इसके चलते न्यूनतम मजदूरी का मसला अब भी अटका पड़ा है।

एक वक्त था जब मजदूर एकता जिंदाबाद के नारे की गूंज किसी भी शहर की गाड़ी पटरी से उतार दिया करती थी। एक वक्त आज है, जब मजदूरों की ताकत का अहसास कराने वाली यूनियन खुद अपना वजूद बचाने के लिए जूझ रही हैं। यह स्थिति मजदूर आंदोलन के चमचमाते अतीत और फीके वर्तमान की समीक्षा करती है।

उतार-चढ़ाव के कारण यह संभव नहीं है।

मैनेजमेंट-नेताओं की यारी

मारुति उद्योग लिमिटेड में हुआ बवाल देश भर में चर्चा का विषय बना। वहां जब मजदूरों का आंदोलन चरम पर था, तभी यूनियन के अध्यक्ष समेत कुछ आला पदाधिकारी मैनजमेंट से मिल गए। नतीजा यह हुआ कि पूरा आंदोलन ध्वस्त हो गया। दरसल, मारुति के स्थायी मजदूर, बड़ी तादात में अस्थायी कर्मियों को रोजगार देने के मैनजमेंट के रवैये का विरोध कर रहे थे। उसी क्रम में उन्होंने कंपनी के एक अफसर की हत्या कर दी। इस घटना से नाराज मैनेजमेंट ने आनन-फानन में 550 से अधिक स्थायी और 1200 अस्थायी कर्मचारियों को नौकरी से निकाल दिया। कंपनी के एचआर हेड एस एफ सिद्दीकी कहते हैं, मजदूरों का एक छोटा तबका गड़बड़ी फैलाता रहा है। लेकिन अब सब कुछ पटरी पर है। आरोप लगते रहे हैं कि मजदूरों संगठनों की ताकत कम करने के लिए मैनेजमेंट का जोर स्थायी कर्मचारियों की संख्या कम करने पर होता है। कोल ईंडिया के आंकड़े भी इस आरोप की पुष्टि करते हैं। साल 1973 में कोल ईंडिया में स्थायी मजदूरों की तादाद 7.50 लाख थी, पिछले साल संख्या घटकर तीन लाख रह गई। पर नियमित मजदूरों की घटती संख्या को लेकर यूनियन ने कभी कोई गंभीर आंदोलन नहीं छेड़ा। 90 के दशक में शुरू हुआ उदारीकरण का दौर भी मजदूर आंदोलन को कमजोर करने के लिए जिम्मेदार है। बाल्को, मारुति और बीएसएनएल जैसे बड़े उपक्रमों में विनिवेश हुआ। नए मालिकों ने स्थायी मजदूरों की छंटनी कर कम पगार पर अस्थायी मजदूरों की भर्ती की। इस बीच आई वीआरएस यानी स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति योजना के चलते बड़ी-बड़ी तादाद में पुराने और स्थायी मुलाजिमों ने नौकरी छोड़ी।

आने वाले दिन भी आसान नहीं

भारतीय अर्थव्यवस्था में और विस्तार की संभावनाएँ हैं, तो मजदूरों की तादाद बढ़ने की संभावना से भी इनकार नहीं है। इसी अनुपात में अस्थायी मजदूर भी बढ़ेंगे। रोजगार की सबसे ज्यादा संभावनाएं

Scanned with CamScanner

खतरे में पक्षियों की 1183 प्रजातियां

अर्चना शर्मा

जनवरी की शुरूआत में ही दुनियाभर में बर्ड-डे मनाया गया। ऐसे में अमेरिका की बर्न फ्री संस्था द्वारा जारी की गई एक रिपोर्ट न सिर्फ चौंकाने वाली है। बल्कि चिंता में डालने वाली भी है। इसके अनुसार मौजूदा वक्त में करीब 12 फीसदी पक्षियों की प्रजाति आने वाले महज कुछ वर्षों में ही लुप्त हो जाएंगी।

अलग-अलग आई वैश्विक रिपोर्ट के अनुसार दुनियाभर में पक्षियों की 9956 प्रजातियां हैं, जबकि अकेले भारत में इनकी संख्या 1314 है। दुखद बात यह है कि वैश्विक रूप से 1183 प्रजातियों पर लुप्त होने का खतरा मंडरा रहा है। इसमें प्राकृतिक से ज्यादा मानवीय कारण हैं।

जूलॉजिकल सोसायटी ऑफ लंदन तथा येल यूनिवर्सिटी द्वारा जारी की गई एक रिपोर्ट में दावा किया गया है कि पक्षियों की हजार से ज्यादा प्रजातियां लुप्त होने की कगार पर हैं। इसमें सबसे ज्यादा पीड़ित है 100 प्रजातियों में से 15 भारत की हैं। बदलती जलवायु के साथ मानवीय हस्तक्षेप के चलते पक्षियों के अस्तित्व पर यह खतरा मंडरा रहा है। इन खूबसूरत जीवों की 128 प्रजातियां पहले ही

विलुप्तता के मुख्य कारण

प्राकृतिक वजह

- क्रमिक विकास की प्रक्रिया के दौरान नई प्रजातियां उत्पन्न होती हैं और वे उस समय विलुप्त हो जाती है, जब वे बदलती परिस्थितियों पर जीवित नहीं रह पातीं।
- कोई विशिष्ट प्रजाति अपने अस्तित्व में आने के एक करोड़ साल बाद विलुप्त हो जाती है। हालांकि कुछ प्रजातियां, जिन्हें जीवित जीवाश्म कहा जाता है कहा जाता है, बच जाती हैं और करोड़ों बरस बीतने पर भी अपरिवर्तित रहती हैं।
- विलुप्तता, एक प्राकृतिक प्रक्रिया है, अनुमान है कि कभी भी अस्तित्व में रही 99.9 फीसदी प्रजातियां अब विलुप्त हो चुकी हैं।

मानवजनित कारण

- क्षमता से अधिक दोहन।
- तकनीकी विकास से पर्यावरण को नुकसान।
- जलवायु परिवर्तन की वजह बनी कृत्रिम गैसों के उत्सर्जन से वायुमण्डल में पसरा प्रदूषण।
- अनियमित पर्यटन।
- अतिक्रमण एवं शिकार

Scanned with CamScanner

विलुप्त हो चुकी हैं। पर्यावरणविदों के मुताबिक यदि पक्षियों के उचित संरक्षण के प्रयास नहीं किए गए तो आने वाले 100 वर्ष में इनकी कुल प्रजातियों का 12 प्रतिशत हिस्सा यानी कि 1183 प्रजातियां पूर्ण रूप से विलुप्त हो सकती है।

ज्यादा प्रजातियां भारत में

भारत में पक्षियों की तेरह सौ से ज्यादा प्रजातियां हैं। वहीं कुल इक्कीस सौ उप-प्रजातियां भी देखने को मिलती हैं। यहां सबसे खास बात यह है कि अकेले उत्तराखण्ड में 693 प्रजातियां पाई जाती हैं। इसकी मूल वजह यह है कि यहां 64.81 फीसद क्षेत्र वनाच्छादित है। विश्व के अठारह सर्वाधिक जैव विविधता वाले क्षेत्रों में पूर्वी हिमालय भी शामिल है। बिहार में तीस से ज्यादा पक्षी-प्रजातियां हैं जिनमें पांच फीसदी प्रवासी पक्षी शामिल हैं। उत्तर प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, जम्मू-कश्मीर और पूर्वोत्तर के प्रदेशों में भी पच्चीस से तीस प्रजातियां पाई जाती हैं।

प्रवासी पक्षियों ने रुख बदला

लद्दाख, चीन, जापान, रूस, साईबेरिया, अफ़गानिस्तान, ईरान, बलूचिस्तान, मंगोलिया, पश्चिम जर्मनी, हंगरी व भूटान से आकाश के रास्ते भारत आने वाले पक्षियों पर खतरा ज्यादा मंडरा रहा है। विदेशों से पोर्टचाई स्पाटबिल, टीलकूट, बहुमणि हंस, लालसर, चाहा क्रेन, आईबिस व डक पक्षी विशेष रूप से भारत आते हैं। करीब तीस फीसदी प्रवासी प्रजाति के पक्षी भारत आते हैं। इनमें से अधिकतर पक्षियों का शिकार किया जाता है। नतीजतन ये प्रवासी पक्षी पुन: अपने वतन नहीं लौट पाते हैं। हर साल अक्टूबर से मार्च तक आने वाले प्रवासी पक्षियों की संख्या में काफी गिरावट आई है।

गायब हो रहे गोरैया-तोते

गोरैया की आबादी में आठ फीसद तक कमी आई है। ब्रिटेन की रॉयल सोसायटी ऑफ प्रोटेक्शन ऑफ बर्ड्स ने तो देश की गोरैया को रेड लिस्ट में डाल दिया है। आंध्रप्रदेश विश्वविद्यालय के एक अध्ययन के मुताबिक शहरी व ग्रामीण दोनों ही क्षेत्रों में गोरैया की संख्या सात फीसद कम हो चुकी है। अध्ययन में इस बात का भी जिक्र है कि आगामी दस सालों में बारह फीसदी प्रजातियां खत्म हो सकती हैं। विश्वभर में तोतों की तीन सौ प्रजातियां हैं। आने वाले पांच वर्षों में तोतों की सर्वाधिक प्रजातियों के विलुप्त होने का खतरा भारत में है। जहां हिमालयी मोर की संख्या का घनत्व पन्द्रह साल पहले 35 प्रति वर्ग किलोमीटर था, अब घटकर 2 प्रति वर्ग किलोमीटर रह गया है।

इंटरनेशनल यूनियन फॉर कंजर्वेशन ऑफ नेचर के मुताबिक भारत में ज्यादा संकट में यह पक्षी...

ग्रेट इंडियन बस्टर्ड: यह दुनिया के सबसे बड़े और वजनदार उड़ने वाले पक्षियों में एक है। इसकी ऊंचाई करीब एक मीटर और वजन लगभग 15 किलोग्राम होता है। यह भूरे रंग का होता है। यह पक्षी सिर्फ भारत और पाकिस्तान में ही पाया जाता है।

कैसे पड़े खतरे में: जंगल और बस्ती के बजाय इनका रहवास घास के मैदान थे, जो खेती, रोड या अन्य उपयोगों की वजह से धीरे-धीरे नष्ट कर दिए गए।

फॉरेस्ट आउलेट: उल्लू परिवार का यह सदस्य सिर्फ 23 सेंटीमीटर लंबा होता है। इसका गठीला शरीर, बड़ा सिर और पंखों का रंग धूसर भूरे से कुछ हल्का होता है। पंखों पर कुछ धारियां होती हैं। आंखें चमकदार और पीली होती हैं।

कैसे पड़े खतरे में : जंगलों की अंधाधुंध कटाई के अलावा जादू-टोने में इनके अंगों के उपयोगी होने के अंधविश्वास से भी यह शिकार की भेंट चढ़ गया।

वल्चर: बीते 10-15 वर्षों में 98 प्रतिशत फीसदी गिद्ध नष्ट हो गए हैं। भारत में इनकी नौ प्रजातियां पाई जाती हैं। इनमें लाल सिर वाला, सफेद गिद्ध, बंगाल गिद्ध और भारतीय गिद्ध स्थानीय प्रजातियां हैं। सभी गिद्धों के पंख स्लेटी रंग में होते हैं। आकार में ये काफी बड़े होते हैं।

कैसे पड़े खतरे में: पशुओं को खिलाई जाने वाली दर्द निवारक डायक्लोफेनिक दवा के चलते इनकी किडनी खराब हो जाती है।

लेसर फ्लो रिकन: यह मुर्गी के आकार का सिर पर कलगियों वाला एक खूबसूरत पक्षी है। खरमोर के सिर, गर्दन और नीचे का भाग काला तथा सफेद होता है। इनके ऊपर के भाग पर काली चित्तियां होती हैं। व्यवहार में यह बहुत ही शर्मीला पक्षी है।

कैसे पड़े खतरे में: रहवास की कमी और शिकार से इन पर संकट आया। नर खरमोर पर उछलते समय शिकारी निशाना साधने का खेल खेते हैं।

Scanned with CamScanner

Health Services to get Industry Status

Samta Pathak

After tourism, now it is the turn of public health services to get the status of industry in Madhya Pradesh. In a bid to encourage private participation in promoting public heath services, the state cabinet has on Tuesday given its consent for according industry status to pubic health services in the state.

Besides this, the cabinet headed by Chief Minister Shivraj Singh Chouhan has also given its stamp of approval for the state's new Agriculture Trade and.

According to the Health Service Investment Policy-2012 endorsed by the cabinet provides for industry status to health service that aims at expanding and promoting health services in the state.

In the policy, status of industry has been accorded to health service sector with a view to making available adequate facilities to investors. In this regard, separate rules and procedures will be chalked out as per Industrial Promotion Policy and it will be endorsed by Apex Investment Promotion Empowered Committee constituted under Industrial Promotion Policy. Capital Investment Subsidy amounting to 25% will be given on opening minimum 100-bed hospital, medical college, nursing & paramedical school and college in cities with less than 10 lakh population.

Its upper limit will be Rs 3 crore in cities upto 10 lakh populations and Rs 5 crore in cities with more population. Assistance of loan subsidy will be made available for

Scanned with CamScanner

establishment of micro, small and medium manufacturing industries as per Industrial Promotion Policy-2000.

Its maximum upper limit will be Rs 30 lakh. Eligibility will be decided on the basis of number of beds.

Maximum subsidy upto 25% will be given of prescribed fees will be given for skill upgradation training of nursing and paramedical staff. Annual fees of Rs 75000 is prescribed for ANM training and Rs 1 lakh for staff training. All the hospitals and medical colleges with 300 or more beds will be upgraded to super specialty hospitals or medical colleges.

All these concessions will be availably only when expanded capacity is 50% more than the basic capacity and new investment is 50 percent more than the original investment. In the policy, multi super speciality and minimum 200-bed hospital and minimum 750-bed medical colleges will be considered as major project and given subsidy on investment and loan.

Subsidy worth 25% will be given on opening multi, super speciality hospital and medical college in cities with upto 10 lakh population. Its maximum limit will be Rs 3 crore and loan subsidy Rs 30 lakh.

On opening multi, super speciality hospital and medical college in cities with above 10 lakh population, 25% investment subsidy will be given. Its maximum limit will be Rs 5 crore and loan subsidy Rs 30 lakh.

Under Health Service Investment Policy, if multi and super specialty hospital is proposed in an area outside municipal limits then five acre land will be made available for 200-bed hospital and 10 acre for 500-bed hospital at 25% premium.

Minimum limit of investment will be Rs 60 crore for 100-bed hospital, Rs 80 crore for 200-bed hospital and Rs 200 crore for 500-bed hospital provided that investment is completed in five years.

Maximum 25 acre land will be allotted to medical college to be established outside municipal limits on Rs 1 premium.

Scanned with CamScanner

जगत पाठक पत्रकारिता संस्थान, भोपाल

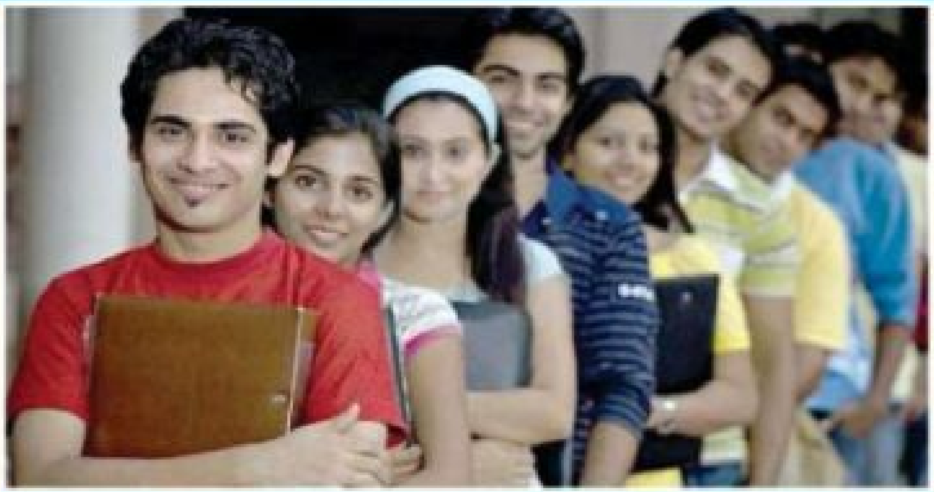

जगत पाठक पत्रकारिता संस्थान वर्ष 1998 से सतत् रूप से संचालित हो रहा है। इस संस्थान से अध्ययन कर छात्र-छात्राएं प्रिंट व इलैक्ट्रॉनिक मीडिया में अच्छे पदों पर पदस्थ हैं। साथ ही साथ शासकीय पद पर आसीन होकर इस संस्थान को गौरवान्वित कर रहे हैं।

: विषय :

मास्टर ऑफ आर्ट जर्नलिज्म (2 वर्ष)

प्रवेश प्रारंभ

संपर्क सूत्र

विजया पाठक (संचालक) - 9826064596

अर्चना शर्मा - 9754199671

कार्यालय - कार्पोरेट कार्यालय - एफ 116/17, शिवाजी नगर, भोपाल, म.प्र.

संस्थान - 28, सुरभि विहार कालोनी, कालीबाड़ी, बी.डी.ए. रोड, भेल, भोपाल, म.प्र.

Scanned with CamScanner

SAWARNA COSMETICS

SHOP NO. 101/152, NEW MARKET,
BHOPAL, M.P. 462016

Scanned with CamScanner

Scanned with CamScanner